कुरुक्षेत्र

जून 1988

मूल्य दो रुपये

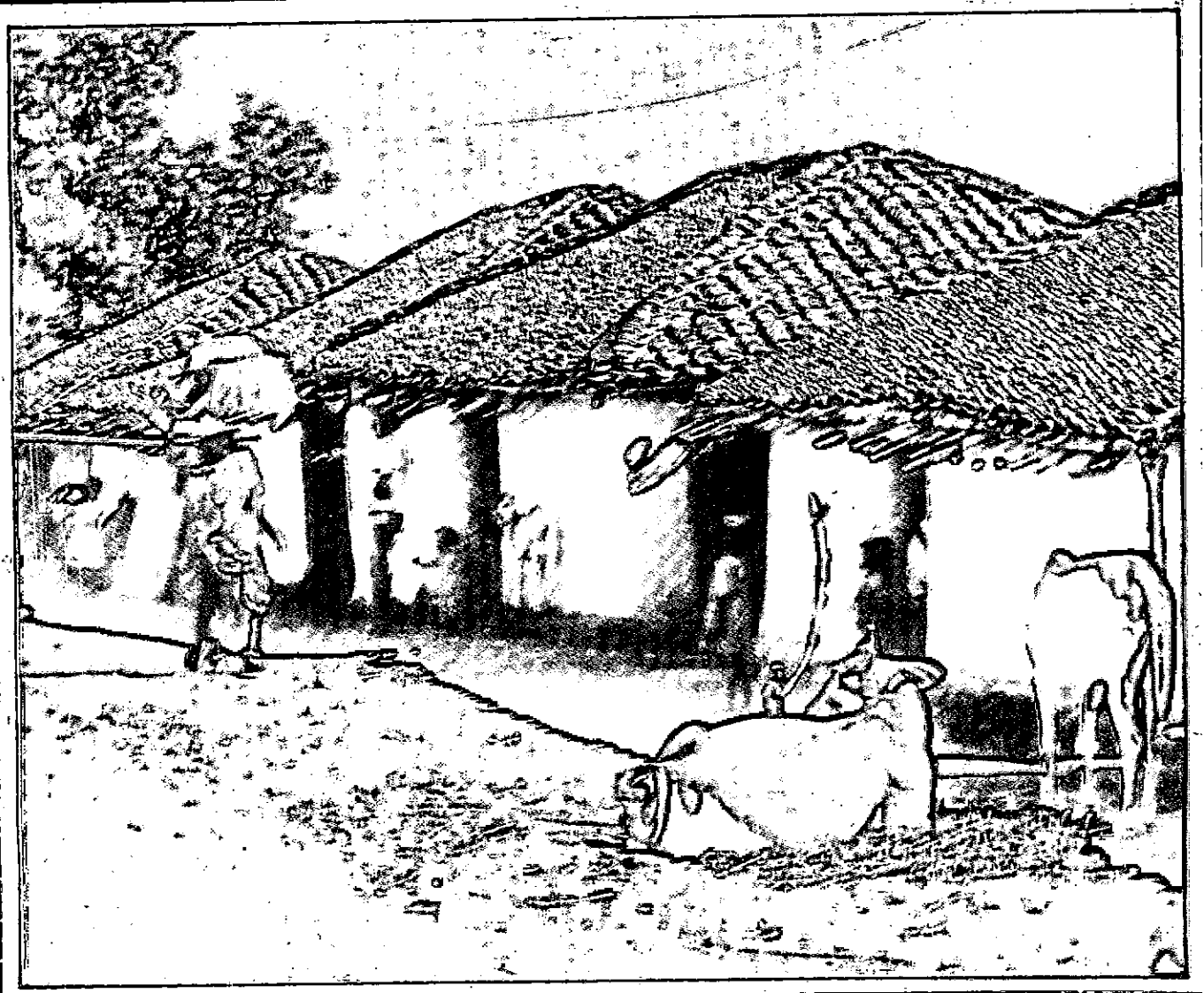

ग्रामीण आवास

ग्रामीण गरीबों के लिए कम लागत वाले मकान बनाने हेतु कई योजनाएं चल रही हैं।

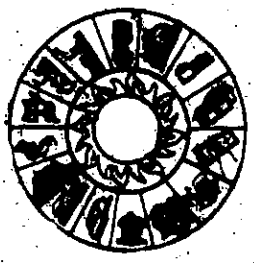

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिये।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 384888

एक प्रति : 2.00 रु.

वार्षिक चन्दा : 20 रु.

सहायक सम्पादक : गुरचरण लाल लूथरा
उप सम्पादक : राकेश शर्मा

सहायक निदेशक : राम स्वरूप मुंजाल (उत्पादन)

आवरण पृष्ठ : एम. एम. मलिक

चित्र : फोटो प्रभाग एवं ग्रामीण विकास विभाग से साभार

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हों।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 33 | ज्येष्ठ-आषाढ़ शक 1910 | अंक-8

इस अंक में

	पृष्ठ संख्या
"सातवीं योजना के दौरान सभी गांवों में पीने का पानी" कृषि मंत्री से भेंट वार्ता	2
सबके लिए मकान विज्ञान और टेक्नोलॉजी की भूमिका पी.डी. वशिष्ठ	7
भू-सुधार कार्यक्रमों द्वारा निर्धनता निवारण डॉ. पद्मावती (पद्मा राय)	10
भारत में ग्रामीण आवास के आयाम आई. उदय भास्कर रेड्डी	13
बारानी खेती : प्रगति और संभावनायें डॉ. बद्री बिशाल त्रिपाठी	16
महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले में भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के आवास हेतु बनाई गई ग्रामीण आवास योजना एम.एम. दहीवाले	19
सार्वजनिक कोष कार्यक्रम नगालैंड के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन अभियान अ.मा. गोखले	23
वापसी (कहानी) रीना तिवारी	26
इन्हीं धरती से (कविता) संजय कुमार, "पंज्यार"	29
आई.आर.डी.पी. — गरीबों का सहारा मुकेश खण्डेलवाल	30
पर्यावरण और सभ्यता कृष्णस्वरूप आनन्दी	32
एगमार्क : मिलावट और आप कु रीटा के. इसरानी	34
बहूपयोगी आंवला नीलम	40

"सातवीं योजना के दौरान सभी गांवों में पीने का पानी"

— भजन लाल

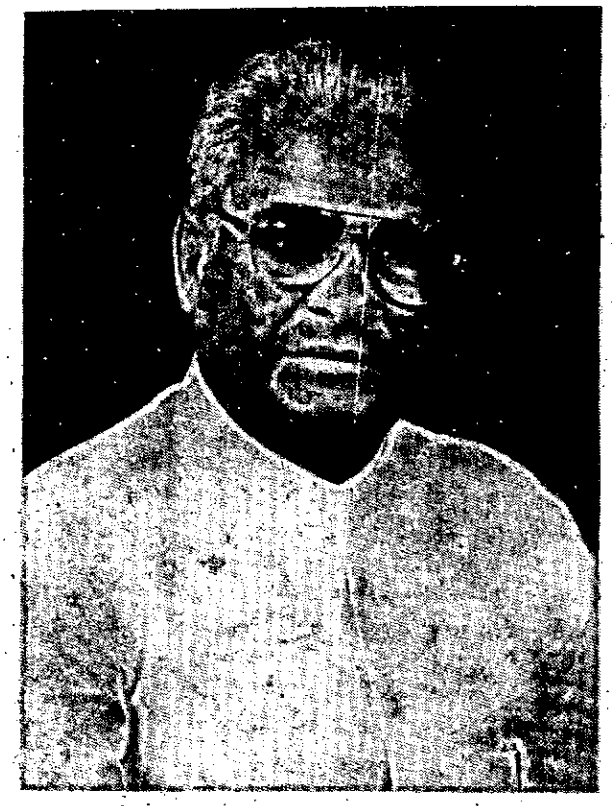

"वर्ष 1990 तक देश में पीने के पानी की समस्या नहीं रहेगी। अगले डेढ़ वर्ष में इसे दूर करने के उपाय किये जायेंगे।" यह बात कृषि मंत्री श्री भजन लाल ने वरिष्ठ पत्रकार श्री एस.सी. भट्ट से एक भेंट में कही है। उन्होंने बताया, "इस समय 69 हजार गांवों में पीने के पानी की सुविधा नहीं है। सातवीं योजना के आरम्भ में ऐसे गांवों की संख्या 1 लाख 69 हजार थी। वर्ष 1990 के अंत तक लगभग 3,400 गांव ही ऐसे रह जायेंगे जहां उस समय तक पानी नहीं पहुंच सकेगा क्योंकि ये गांव मुख्यतः दूर-दराज क्षेत्रों में या फिर ऊंचे पहाड़ों में स्थित हैं जिसके फलस्वरूप वहां पानी पहुंचाने के काम में विशेष समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।"

श्री भजन लाल ने आश्वासन दिया कि ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की सप्लाई के अतिरिक्त स्वास्थ्य कार्यक्रमों का भी तेजी से विस्तार किया जायेगा ताकि लोगों के स्वास्थ्य की देखभाल हो सके। उन्होंने कहा कि परिवहन तथा संचार की समस्या दूर करने के लिये सड़कों को भी सुधारा जायेगा। सरकार चाहती है कि ग्रामीण क्षेत्रों को आत्मनिर्भर बनाया जाये ताकि शहरों में गांवों से लोगों का आना रुक सके।

प्रश्न: *पिछले कुछ समय से अधिक कृषि उत्पादन और तीव्र ग्रामीण विकास पर जोर दिया जा रहा है। इसका क्या कारण है?*

उत्तर: *खेती पर ज्यादा जोर देने का मकसद यह है कि बीच में अनाज का उत्पादन उस अनुपात में नहीं बढ़ रहा था जिस अनपात में आबादी बढ़ रही है। अगर आबादी इसी गति से बढ़ती रही और उत्पादन वहीं का वही ठहरा रहा तो देश के सामने खाद्यान्न की विकट समस्या खड़ी हो जाएगी। इसलिए हम चाहते हैं कि बढ़ती आबादी की आवश्यकता के अनुसार खाद्यान्नों का उत्पादन भी बढ़े। इसी उद्देश्य के लिये हमने विशेष कृषि उत्पादन कार्यक्रम बनाए हैं ताकि उत्पादन बढ़े। इसीलिए प्रधानमंत्री जी ने उन 14 राज्यों जो कृषि उत्पादन में 85 प्रतिशत से 90 प्रतिशत तक योगदान करते हैं, के मुख्य मंत्रियों के साथ मीटिंग की और विशेष कार्यक्रम उनके सामने रखा। मुख्य मंत्रियों ने इस कार्यक्रम को स्वीकार किया। केन्द्रीय सरकार की तरफ से उनकी पूरी सहायता की जाएगी। उर्वरक, बीजों आदि से किसानों को मदद दी जायेगी ताकि उनको अपनी मेहनत का अच्छा फल मिले।*

प्रश्न: *ग्रामीण विकास में जितना काम होना चाहिए था, उतना नहीं हुआ है क्या केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें इस ओर अधिक जागरूक हुई हैं या यह किसानों के वर्तमान आंदोलन की प्रतिक्रिया मात्र है?*

उत्तर: *ये आंदोलन तो राजनैतिक हैं। कुछ स्वार्थी तत्व निहित राजनैतिक स्वार्थों के लिए किसानों को गुमराह कर रहे हैं...*

प्रश्न: *उत्तर प्रदेश में श्री महेन्द्र सिंह टिकैत के आंदोलन के बारे में आपके क्या विचार हैं?*

उत्तर: *उत्तर प्रदेश में किसान नेता कहते हैं कि बिजली के बिल माफ कर दो। बिजली के बिल कैसे माफ किये जा सकते हैं? पहले से किसानों को भारी रियायती दरों पर बिजली प्रदान की जाती है। जहां बिजली घर में 70 पैसे प्रति यूनिट की दर से बिजली सप्लाई होती है, वहीं किसानों को मात्र 16 पैसे प्रति यूनिट पड़ती है। सिंचाई जैसी सुविधाओं के जरिए सरकार किसानों को करोड़ों रुपयों की रियायत देती है। ऋणोंकी ब्याज दर में भी छूट दी जाती है। 3000 करोड़ रुपये की सबसिडी अकेली खाद के लिए दी जाती है। देश में बहुत विकास हुआ है। जिन लोगों ने चालीस साल पहले का हिन्दुस्तान देखा था, वे ही बता सकते हैं कि भारत ने कितना विकास किया है। आज के युवकों को उस समय की परिस्थितियों का अंदाजा नहीं। जिस देश में सुई भी नहीं बनती थी वहां आज हवाई जहाज, रेल के इंजन, टैंक तक बनते हैं। एक-एक दाने को हम मोहताज थे। दूसरे मुल्कों से मांगकर खाना पड़ता था, आज हम खाद्यान्न के मामले में सरप्लस हैं। यह कैसे हो पाया? हमारी नीतियों की वजह से। ये पंडित जवाहरलाल नेहरू एवं श्रीमती इन्दिरा गांधी की नीतियां थीं कि देश आगे बढ़े। हमने देखा है कि देश आज आगे बढ़ा है।*

प्रश्न: ग्रामीण विकास पर खास ध्यान जो अब दिया जा रहा है, उसका क्या मतलब है ?

उत्तर: नहीं, ध्यान हमेशा दिया गया है। ऐसा नहीं कि ग्रामीण विकास पर पहले ध्यान न दिया गया हो लेकिन अब और भी ज्यादा देने की जरूरत है क्योंकि किसान देश की रीढ़ की हड्डी है और किसान को आगे बढ़ाना है। किसान को आगे बढ़ाने के लिए कुछ साधन देने पड़ेंगे। इसलिए आवश्यक है कि देश में उत्पादन ज्यादा हो और हमें किसी मुल्क के सामने जाकर हाथ नहीं फैलाने पड़ें। तभी हम मजबूती के साथ और अपना सिर ऊंचा करके दूसरे मुल्कों से बात कर सकेंगे। अगर हम भोजन तक के लिए हाथ फैलायेंगे तो सिर ऊंचा कैसे रहेगा ?

प्रश्न: अब भी देहातों से बहुत से लोग लाखों करोड़ों की तादाद में शहरों की ओर चले आते हैं क्योंकि गांवों में उनके पास काम नहीं है। उनके पास न रोजगार है न ही खाने के लिए भोजन। इसके लिए क्या यह जरूरी नहीं है कि ग्रामीण विकास की तरफ और अधिक ध्यान दिया जाए ?

उत्तर: इसीलिए प्रधानमंत्री जी ने बेकारी हटाओ का नारा, एक आदर्श, देश के सामने रखा है। इंदिरा जी ने गरीबी दूर करने का नारा दिया था और गरीबी काफी हद तक दूर भी हुई। कुछ कार्यक्रम अभी भी चालू हैं। बेकारी का सवाल अभी भी हमारे सामने है। बहुत से पढ़े-लिखे नौजवान आज बेकार हैं। हम चाहते हैं कि उनके हाथों को कुछ काम दें चाहे नौकरी हो या दूसरा कोई कारोबार। हम चाहते हैं कि देश में और अधिक कृषि आधारित उद्योग लगें। इसमें युवकों को रोजगार के लिए ऋण, कच्चे माल, वितरण आदि की सुविधाएं प्रदान करना शामिल है।

प्रश्न: और ये जो पीने के पानी की समस्या है। इसके लिए टेक्नोलॉजी मिशन के काम में क्या प्रगति हुई है?

उत्तर: उन्होंने अच्छा सर्वे किया है। पीने के पानी की समस्या 1990 के बाद इस मुल्क में बिल्कुल नहीं रहेगी। ये समस्या आगामी डेढ़ साल में समाप्त हो जाएगी। इस वक्त मुल्क में कुल 69 हजार गांव ऐसे हैं जहां पीने के पानी की समस्या है और सातवीं पंचवर्षीय योजना के आरंभ में एक लाख उनहत्तर हजार ऐसे गांव थे। लगभग एक लाख गांवों में काम प्रायः समाप्त होने जा रहा है, 69 हजार बाकी रह गए हैं। वहां भी दिसम्बर 1990 तक कार्य पूरा कर लिया जाएगा। इसके बाद दूरदराज और पहाड़ी इलाकों में, जहां पानी पहुंचाने में बहुत दिक्कत है, कोई तीन चार हजार गांव बाकी रह जाएंगे। बाकी सभी गांवों में 1990 तक पीने का पानी पहुंचा दिया जाएगा।

प्रश्न: 1990 तक का लक्ष्य है। क्या आपको पूरा विश्वास है कि इस समस्या को पूर्ण रूप से हल कर लिया जायेगा ?

उत्तर: सातवीं योजना के अंत तक हर हालत में सभी गांवों में पेयजल पहुंचा दिया जायेगा।

प्रश्न: इस कार्यक्रम एवं टेक्नोलॉजी मिशन में सैम पित्रोदा की क्या भूमिका है?

उत्तर: उनका योगदान बहुत अच्छा है। वह बहुत समझदार व्यक्ति हैं। वह बड़ी लगन के साथ समस्या की तह में गए। यह भयंकर समस्या है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने कहा था कि यदि हम लोगों को पीने का पानी तक न उपलब्ध करा पाए तो वे किस तरह का जीवन जी पाएंगे। इंसान अनाज के बिना 3,5 या 10 दिन बिता सकता है लेकिन पानी के बगैर बड़ी मुश्किल है। पानी और हवा दोनों जीवन के लिए जरूरी हैं। पानी और हवा नहीं है तो कुछ भी नहीं है। हवा तो परमात्मा की देन है। लेकिन पेयजल उपलब्ध कराना सरकार का उत्तरदायित्व है। हम देखेंगे कि यह जिम्मेदारी निभाई जाए।

प्रश्न: पित्रोदा साहब का इसमें क्या रोल है?

उत्तर: पित्रोदा साहब काम कर रहे हैं और इसमें लगे हुए हैं कि कैसे गांवों में पानी पहुंच सकता है। निरीक्षण करते हैं, मानीटर भी करते हैं कि काम योजना के अनुसार ठीक चल रहा है कि नहीं, क्या स्थिति है आदि।

प्रश्न: क्या उनकी मुख्य भूमिका निगरानी की है?

उत्तर: निगरानी की भी है और साथ में सलाह देने की भी।

प्रश्न: अच्छा! अब भूमि सुधार की चर्चा करें, जिसकी शुरुआत तो अच्छी हुई, मगर उसके बाद विशेष प्रगति नहीं हुई। जिन लोगों के पास जो जमीन पहुंचनी चाहिए थी, उनको नहीं मिली। अधिकतम-सीमा के नियमों से बचने के लिए, भूमि का परिवार में ही बंटवारा कर लिया गया। क्या भूमि सुधार को लागू करने के लिए कदम नहीं उठाए जा रहे।

उत्तर: जहां तक भूमि सुधार का ताल्लुक है, देश में बहुत तेजी के साथ इस कानून को लागू किया गया। नेहरू जी ने काश्तकारों को भूमि हस्तान्तरण पर बहुत जोर दिया। हमने इस दिशा में बहुत प्रगति की है। लेकिन आप जानते हैं कि अदालतें इसमें रोड़ा बन गईं। अदालतों के बारे में कहना अच्छी बात तो नहीं है, लेकिन 20-20 साल से मुकदमें अदालतों में पड़े हैं। उच्च न्यायालयों में हैं, उच्चतम न्यायालय में हैं। फैसला होता नहीं है और फिर हमारी अपनी मुश्किलें हैं। सरकार की तरफ से पूरी कोशिश हो रही है। उपलब्ध 80 लाख एकड़ जमीन में से 44 लाख का बंटवारा हुआ है। 36 लाख के बारे में अदालतों में "स्टे" पड़े हुए हैं। हमने राज्य सरकारों को लिखा है, रेवन्यू मिनिस्टर्ज के सम्मेलनों में बार-बार कहा है कि भूमिहीनों में भूमि के वितरण में तेजी लाई जाए।

प्रश्न: *लोगों ने अपने परिवार में ही बंटवारा कर लिया और दिखा दिया कि हमने तो अधिकतम सीमा नियम का पालन किया है। क्या इस तरीके से नियमों का उल्लंघन नहीं किया गया।*

उत्तर: *घर के अंदर बंटवारे का जहां तक ताल्लुक है तो वो कानून के प्रावधान से रुक सकता है। लेकिन जहां परिवार बढ़ गए हैं वहां उनको यह अधिकार है। अगर आपका बेटा बालिग हो गया हो उसको अलग "घर" माना ही जाएगा। ऐसा कानून है। इसमें कानून के उल्लंघन का सवाल ही नहीं है।*

प्रश्न: *ग्रामीण क्षेत्रों का भविष्य क्या है? भारत के गांवों के बारे में आपकी भविष्य-दृष्टि क्या है?*

उत्तर: *इसमें संदेह नहीं कि गांवों की ओर से लोग शहरों की तरफ भाग रहे हैं। उसका एक कारण यह भी है कि देहात में आवश्यक सुविधाएं जैसे सड़क, बिजली, पानी, अस्पताल, स्कूल, कालेज आदि का अभाव है। इसीलिए लोगों के मन में आकर्षण पैदा होता है और वे गांवों को छोड़ शहरों की ओर भागते हैं। इनकी वजह से लोग देहातों से शहरों की तरफ भाग रहे हैं। अगर शहरों में इस तरह आबादी बढ़ती रही तो बड़ी मुश्किल हो जाएगी। दिल्ली को ले लीजिए, कितनी आबादी बढ़ गई है। कितनी मुसीबतें लोगों के सामने हैं। इसीलिए हमें सारी सुविधाएं गांवों में प्रदान करनी चाहिए। होना तो यह चाहिए कि शहर का आदमी देहात की तरफ जाए। देहात की आबो-हवा अच्छी है, रहन-सहन अच्छा है, रहने का ढंग अच्छा है। साफ हवा जो गांवों में मिल सकती है, बड़े शहरों में नहीं मिल सकती। पर्यावरण की दृष्टि से गांव अच्छा है। प्रदूषण नहीं है वहां पर। लेकिन यह सब तभी हो सकेगा जब हम गांव को पूरी सुविधायें देंगे। जैसा मैंने कहा था कि हम पीने के पानी देने का इंतजाम कर रहे हैं, स्वास्थ्य का इंतजाम भी बहुत तेजी से किया जा रहा है ताकि ज्यादा-से-ज्यादा अस्पताल देहात में हों, लोगों की देखभाल ठीक हो और गांव में सड़कें भी बनें ताकि लोगों को आने-जाने में दिक्कत न हो और लोगों को यातायात ठीक से मिल पाये और लोगों को तकलीफ कम से कम हो।*

सबके लिए मकान

विज्ञान और टेक्नोलॉजी की भूमिका

पी.डी. वशिष्ठ

मनुष्य की तीन बुनियादी सुविधायें हैं रोटी, कपड़ा और मकान। इन में से अब मकान का प्रबंध करना व्यक्ति के लिए लिए सबसे कठिन काम हो गया है। 1976 में संयुक्त राष्ट्र ने सारे संसार का ध्यान आवास समस्या की ओर आकर्षित किया। उसके बारह वर्ष बाद आज लगता है दुनिया इस मसले के प्रति पहले से अधिक जागरूक हो गई है। संयुक्त राष्ट्र मानव आवास केन्द्र द्वारा किए गए सर्वेक्षण के अनुसार, एक अरब से भी अधिक लोग या तो बेघर हैं या अपर्याप्त तथा हानिकर स्थितियों में रह रहे हैं। 10 करोड़ से भी अधिक बेघर लोग सड़कों और फुटपाथ या पुलों के नीचे सोकर रात गुजारते हैं। इनमें से अधिकतर लोग विकासशील देशों के हैं, जहां जनसंख्या में वृद्धि, बेरोजगारी तथा अन्य आर्थिक मजबूरियों के कारण आवास समस्या और गंभीर होती जा रही है। संयुक्त राष्ट्र के सर्वेक्षण से यह बात भी सामने आई है कि पिछले इन वर्षों में 35 करोड़ से ज्यादा लोग गांवों को छोड़कर शहरों में जा बसे हैं। विकासशील देशों में शहरों और कस्बों में आवास समस्या को हल करने में उल्लेखनीय प्रगति न होने का यह भी एक कारण है। जहां तक गांवों का संबंध है, वहां भी आवास की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है और आने वाले अनेक वर्षों में इस समस्या के समाधान के कोई आसार दिखाई नहीं दे रहे हैं।

विकासशील देशों में जनसंख्या बढ़ने के अलावा वहां की सरकारों द्वारा आवास के लिए बहुत कम धनराशि रखी गई है और इस दिशा में जागरुकता का भी अभाव है। यही नहीं, इन देशों को मकान बनाने के लिए विदेशी मदद भी आवश्यकता से काफी कम मिली है बल्कि आवास के लिए विदेशी सहायता में लगातार कमी होती जा रही है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की 1986 की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार आवास क्षेत्र पर कुल खर्च 1979 में एक करोड़ 2 लाख डालर से घट कर 1984 में एक करोड़ डालर रह गया।

गलत नीतियां अपनाने के फलस्वरूप भी समस्या और बिगड़ी है। आर्थिक तथा वास्तुशिल्प सम्बंधी उचित योजनाओं, भवन निर्माण सामग्री, वित तथा टेक्नोलॉजी और स्वयं सेवी संस्थाओं के सहयोग के अभाव में आवास की दिशा में अपेक्षित प्रगति नहीं हो पाई। इसके अलावा सरकारी तंत्र लोगों को इस लायक नहीं बना पाया कि वे स्वयं मकान बनाने की दिशा में पहल करें। प्रायः यह होता है कि आवास के लिए निर्धारित धन, विशेष सहायता तथा रियायतों का लाभ सम्पन्न लोग हड़प लेते हैं और सामान्य तथा निर्धन लोग उनसे वंचित रह जाते हैं। मकान बनाने के तरीके भी अक्सर खर्चीले तथा अधिक लागत वाले होते हैं। महंगे सीमेंट, ईंटों, लकड़ी तथा लोहे के इस्तेमाल पर कम जोर दिया जाना चाहिए और स्थानीय कारीगरों को अपने ढंग से मकान बनाने का मौका मिलना चाहिए।

वर्तमान स्थिति

यह सच है कि सरकारें गरीबों को आवश्यकता के

अनुरूप मकान उपलब्ध कराने के प्रयासों में विफल रही हैं, किन्तु लोगों ने गैर कानूनी रूप से ही सही अपने-अपने ढंग से मकान बनाना बन्द नहीं कर दिया है। आखिर प्रत्येक परिवार की अपनी घर बनाने की हार्दिक इच्छा रहती है। लोग अपनी अक्ल तथा समझ से अपने रहने की स्थितियों को बेहतर बनाने का प्रयास करते रहते हैं, भले ही इसके लिए उन्हें कर्जा ही क्यों न लेना पड़े। गरीब बेघर लोग हमेशा ही खाली जमीन, खास कर सरकारी या गैर सरकारी भूमि की खोज में रहते हैं, जहां वे झुग्गी-झोपड़ी डाल सकें और उसे खाली करने के एवज़ में वे बाद में वैकल्पिक जगह की मांग कर सकें। ऐसे में उन्हें पुलिस की सख्ती भी झेलनी पड़ती है। मकान का इंतजाम करने में इन लोगों की गरीबी तो आड़े आती ही है, सरकार की कड़ी नीतियां भी उनके सपने पूरे होने में बाधक बनती हैं। इसके विपरीत होना यह चाहिए कि बेघर लोगों को अपने मकान बनाने के प्रयासों में मदद की जाए और उनके प्रति सहानुभूति का रवैया अपनाया जाए। असल में बेघर लोगों द्वारा जमीन पर आवास बना लेने वालों को सरकार और समाज का सहायक माना जाना चाहिए। यही नहीं उन्हें पीने के पानी, सफाई सड़कें, बिजली, परिवहन, प्राथमिक स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी बुनियादी सुविधाएं भी उपलब्ध कराई जानी चाहिए। जिन लोगों का पुनर्वास किया जाता है, उन्हें भी ऋण तथा अन्य रियायतें दी जानी चाहिए ताकि उन्हें रोजगार मिल सके या वे अपना काम धंधा चला सकें। उनकी बस्तियों में सब तरह की सुविधाएं होंगी तो वे दूसरी जगहों पर नहीं जाएंगे और अपनी बस्ती में ही टिके रहेंगे। इसके अतिरिक्त सम्पत्ति के एजेंटों तथा मकानों के सम्पन्न खरीददारों को उनके मकान खरीदकर उन्हें फिर से बेघर करने की प्रवृत्ति को भी निरुत्साहित किया जाना चाहिए। कई बार इन तत्वों की शह पर काम करने वाले गुंडों, बदमाशों से भी गरीब लोगों की रक्षा करने की जरूरत होती है।

आवास के लिए उपयुक्त टेक्नोलॉजी

यह एक मानी हुई बात है कि आवास जैसे प्रमुख राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने में टेक्नोलॉजी का पर्याप्त योगदान है। नीति में परिवर्तन तथा धन उपलब्ध कराने के साथ-साथ भवन निर्माण की टेक्नोलॉजी और भवन निर्माण सामग्री की उपलब्धता भी आवास समस्या के समाधान में बहुत सहायक हो सकती है। सौभाग्य से अधिकतर देशों में अब इस ओर ध्यान दिया जाने लगा है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के कार्यकारी निदेशक डॉ. एम. तालबा का कहना है कि निर्धन लोग अपनी आवास समस्याएं स्वयं हल कर सकते हैं। ऐसी योजनाएं और नीतियां बनाई जानी चाहिए जिनसे स्थानीय तौर पर उपलब्ध सामग्री के उपयोग को बढ़ावा मिले। परम्परागत सामग्री की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए जो कि स्थानीय तौर पर आसानी से मिल जाती है। नई टेक्नोलॉजी ऐसी होनी चाहिए जो मौजूदा तरीकों तथा सामाजिक पद्धतियों से मेल खाती हो।

टेक्नोलॉजी का उद्देश्य रोजगार के अवसर पैदा करना और भवन निर्माण क्षेत्र में उद्यमियों को प्रोत्साहित करना होना चाहिए। मकान बनाने के ढंग को बेहतर बनाने तथा सामुदायिक सेवाओं के सुधार के साथ-साथ कम लागत की निर्माण विधियों के परीक्षण के लिए अनुसंधान और विकास गतिविधियों पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इतनी बड़ी संख्या में बेघर लोगों के लिए मकान बनाने के वास्ते बहुत बड़ी मात्रा में निर्माण सामग्री की आवश्यकता है। जिसे इस समय चल रहे बड़े कारखाने पूरा नहीं कर सकते। इसलिए निर्माण सामग्री का उत्पादन छोटे कारखानों में किया जाना चाहिए एवं ऐसी नई कार्य योजना तैयार करने की जरूरत है जिससे निर्माण सामग्री के छोटे उत्पादकों तथा अपना मकान स्वयं बनाने वालों को सहायता मिले। कुछ समय पहले तक सस्ती ईंटों, बांसों, पत्थरों और गारा-कीचड़ से ही मकान बनाए जाते थे, जबकि अब महंगे सीमेंट, लोहे, ईंटों आदि का इस्तेमाल होने लगा है। निहित स्वार्थ वाले लोग इतने शक्तिशाली हो गए हैं कि वे सरकारी प्रयासों को विफल बनाने के साथ-साथ गरीबों को भी सस्ते मकान नहीं बनाने देते। यदि लोगों को सस्ती सामग्री का इस्तेमाल करने दिया जाए तो वे इस सामग्री में और संशोधन भी करते रहेंगे। जब अधिकतर इलाकों में बांस, पत्थर, गारा-कीचड़ जैसी सामग्री अब भी अच्छी खासी मात्रा में उपलब्ध है तो गरीब बेघर लोगों पर महंगी सामग्री क्यों थोपी जाए? यही नहीं कुछ मामलों में तो निर्माण सामग्री का आयात तक किया जा रहा है। इस समय ऐसी अनेक तकनीकें मौजूद हैं, जिनसे कारखानों के बिना ही स्थानीय सामग्री से बहुत अच्छे

किस्म की मजबूत भवन निर्माण सामग्री तैयार की जा सकती है।

सामान्य मिट्टी में कुछ तत्वों को मिलाकर उसे पक्का बनाया जा सकता है। उपयुक्त टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल से ईंटों को छोटे स्तर पर तैयार करना संभव है। यही बात चूने के बारे में सही है, जो पहले सीमेंट की जगह इस्तेमाल होता था। सीमेंट की जगह इस्तेमाल के लिए और भी कई वस्तुएं कम लागत पर स्थानीय साधनों से बनाई जा सकती हैं। इमारती लकड़ी तथा बांसों के उपयोग के सम्बंध में भी उच्च स्तर की टेक्नोलॉजी अब उपलब्ध है। अब तो फाइबर कंक्रीट रूफिंग, टाइल, लाइम ट्रास ब्लाक, सल्फर ब्लाक जैसी अनेक तरह की नई टेक्नोलॉजी भी विकसित हो चुकी है। इनसे छोटे पैमाने पर भवन-निर्माण सामग्री बनाई जा सकती है। बेघरों के लिए घर का अंतर्राष्ट्रीय वर्ष मनाए जाने से वैकल्पिक भवन निर्माण सामग्री विकसित करने की आवश्यकता की तरफ सारे संसार का ध्यान आकर्षित करने में पर्याप्त मदद मिली है। भारतीय योजनाकारों का दायित्व यह है कि वे उचित और उपयुक्त टेक्नोलॉजी का चयन करके छोटे पैमाने पर भवन सामग्री के उत्पादन को बढ़ाने दें और उसे गरीब लोगों तक पहुंचाएं।

नई टेक्नोलॉजी के सम्बंध में प्रमुख त्रुटि यह है कि उनका इस्तेमाल कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है और अन्य क्षेत्रों के निर्माता, आलोचक और उपभोक्ता उस बारे में अनभिज्ञ रहते हैं। इसका कारण यह है कि इनको बढ़ावा देने वालों को सम्पन्न निगमों, बहु-राष्ट्रीय कम्पनियों तथा राजनीतिक तत्वों का समर्थन प्राप्त नहीं है।

गरीब तथा विकासशील देशों को विदेशी सहायता एजेंसियों और औद्योगिक देशों से मिली सहायता की आड़ में गलत टेक्नोलॉजी के हस्तांतरण से सावधान रहना होगा। ऐसी टेक्नोलॉजी पर आधारित उद्योग लगाने से विकासशील देशों पर प्रतिकूल आर्थिक प्रभाव पड़ेगा और वे ऋण जाल में फंसेंगे और फिर इनमें बहुत अधिक बिजली या ईंधन की जरूरत पड़ती है। जिसका बुरा असर कृषि पर पड़ना स्वाभाविक है।

अमीर देशों के इस जाल में आकर सरकारों को इन बड़े उद्योगों को कम ब्याज पर कर्जे देने पड़ते हैं तथा उन पर कड़ी नजर भी रखनी पड़ती है। आयातित टेक्नोलॉजी पर अधिक निर्भरता का एक दुष्परिणाम यह भी होता है कि छोटे उद्यमों तथा स्थानीय भवन निर्माण सामग्री के उपयोग की उपेक्षा होती है। इससे बेघर गरीब लोगों का अपना छोटा-सा मकान बनाने का सपना चूर-चूर हो जाता है।

अन्य पहलू क्या है

संयुक्त राष्ट्र ने 1987 को बेघरों के लिए घर का अंतर्राष्ट्रीय वर्ष घोषित करके विश्व का ध्यान आवास की ओर दिलाने का सराहनीय प्रयास किया है। इसमें वास्तव में गरीबों द्वारा अपनी आवास स्थितियों को बेहतर बनाने के प्रयासों को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। इसके लिए सामूहिक संगठन, प्रशिक्षण कम लागत की भवन निर्माण सामग्री में सुधार तथा नई नीति जैसे अन्य अनेक पहलुओं पर भी ध्यान देना होगा। गरीबों को इस लायक बनाया जाना चाहिए कि वे स्वयं अपनी मेहनत से निर्माण सामग्री तैयार करके उससे अपने मकान बना सकें। पुरुषों और महिलाओं को रोजगार दिलाने वाला यह उपाय आवास क्षेत्र के विकास का महत्वपूर्ण पहलू बनाया जाना चाहिए। शहरी तथा ग्रामीण दोनों तरह के लोगों को अपने-अपने ढंग से कम लागत के मकान बनाने के तरीके समझा कर अपना मकान बनाने की ललक पैदा की जानी चाहिए।

सरकारी रवैये के अलावा भवन निर्माण से सम्बंधित कानून तथा अन्य नियंत्रण भी गरीबों की आवास समस्याएं हल करने में बांधक रहे हैं। भारत जैसे देश में इन नियमों पर नए सिरे से विचार करने की आवश्यकता है। कम लागत की भवन-निर्माण सामग्री का उत्पादन करने वाले छोटे-छोटे सभी उद्योगों के लिए बिजली, पानी जैसी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करायी जानी चाहिए।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बेघर लोगों को ऋण, स्वास्थ्य सुविधाएं, परिवहन, बिजली, पानी, स्वच्छता तथा अपना काम धंधा शुरू करने जैसी सुविधाएं उपलब्ध कराकर उनके दिल में अपने साधनों से मकान बनाने की भावना जगाई जानी चाहिए। लोगों को ये सभी सुविधाएं दिलाने की व्यवस्था एक ही संस्था के हाथ में होनी चाहिए, जिससे वे सम्मान तथा गौरव के साथ अपने मकान में रहने का सुख प्राप्त कर सकें।

अनुवाद : सुभाष चन्द्र सेतिया

भू-सुधार कार्यक्रमों द्वारा निर्धनता निवारण

डॉ. पद्मावती (पद्मा राय)

आर्थिक संकेन्द्रण के निवारण हेतु सरकार ने मुख्यतः दो उपायों– 'भूमि-सुधार' तथा 'राजकोषीय नीति' पर बल दिया है। पहले का सम्बन्ध ग्रामीण क्षेत्रों से है और दूसरे का मुख्यतः शहरी क्षेत्रों से। भूमि सुधारों को ग्रामीण निर्धनता-निवारण कार्यनीति का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है। लेकिन भूमि सुधार कार्यक्रमों से, विभिन्न कठिनाइयों और दोषों के कारण, गरीबों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाया है। भूमि सुधारों की नीति विषयक घोषणा और तदर्थ कानून बनाने में अन्तराल के कारण तथा सरकार में बड़े किसानों एवं सामन्तों के प्रभुत्व के कारण भूमि-सुधार सम्बन्धी कानून अपेक्षित रूप से प्रभावशील नहीं हो पाये। भूमि सुधार सम्बन्धी कानूनों के क्रियान्वयन में विलम्ब के कारण तथा उनमें विद्यमान कुछ शिथिलताओं का लाभ उठाकर बहुत से बड़े किसान अधिकतम जोत की सीमा के प्रतिबन्धों से बच निकले और अपने पुत्रों तथा निकट सम्बन्धियों के नाम उन्होंने बहुत सी भूमि का हस्तान्तरण कर दिया। काश्तकारी सुधार भी पूर्णतया प्रभावी नहीं हो पाये। अधिकतम जोत सीमा निर्धारण के बाद उपलब्ध हुई अधिशेष भूमि प्रायः घटिया किस्म की रही है जिससे निर्धनों को बहुत लाभ नहीं मिल सका है। भूमि आवंटन की गति भी धीमी है और निर्धनों के पक्ष में आवंटित भूमि पर कब्जा प्राप्त करने में कहीं-कहीं कठिनाइयां विद्यमान हैं।

पहले चरण में, 1950 के दशक के अन्त तथा 1960 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में अधिकतम जोत सीमा निर्धारण सम्बन्धी कानूनों का परिपालन होना शुरू हुआ और कुल 10 लाख 60 हजार ग्रामीण भूमिहीन परिवारों के बीच 8 लाख 10 हजार हैक्टेयर उपलब्ध हुई अधिशेष भूमि का वितरण किया गया। प्रारम्भ में कानूनों के अन्तर्गत निर्धारित अधिकतम जोत की सीमा विभिन्न राज्यों में बहुत अधिक थी और सामान्यतया बहुत सी छूटें भी दी गई थीं। फलस्वरूप जुलाई 1972 में अधिकतम जोत की सीमा के सम्बन्ध में एक राष्ट्रीय नीति बनाई गई जिसमें उपर्युक्त दोषों के निवारण हेतु प्रयास हुए और विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित क्षेत्रों में कुछ हद तक इस कानून में एकरूपता लाने के सम्बन्ध में सुझाव दिये गये। इस राष्ट्रीय नीति के अनुसार, दूसरे चरण में, पूरे देश में अधिकतम जोत सीमा के सम्बन्ध में कानून बनें और लागू किये गये। फलस्वरूप दिसम्बर 1983 तक 17 लाख 44 हजार हैक्टेयर उपलब्ध हुई अतिरिक्त भूमि में से 12 लाख 20 हजार हैक्टेयर भूमि पर राज्यों ने अधिकार करके 8 लाख 24 हजार हैक्टेयर भूमि का वितरण किया और इस वितरण से लाभान्वित होने वाले परिवारों की संख्या 15 लाख 40 हजार थी। अधिकतम जोत सीमा के सम्बन्ध में बने नये कानूनों के अन्तर्गत वितरित भूमि से कुल लाभान्वित परिवारों में 54 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के हैं और वितरित कुल भूमि में इन परिवारों को आवंटित भूमि का प्रतिशत 52 है। दोनों चरणों में अधिकतम जोत सीमा निर्धारण के बाद उपलब्ध हुई अधिशेष भूमि के वितरण के फलस्वरूप लाभान्वित प्रति परिवार को औसतन 0.63 हैक्टेयर भूमि की प्राप्तियां हुई हैं। इन परिवारों को प्राप्त जमीनें एक तो कम हैं और दूसरे जैसा कहा जा चुका है, प्रायः घटिया किस्म की हैं। इन पर इतनी उपज प्राप्त करना मुश्किल है कि ये लाभान्वित परिवार खेती पर ही निर्भर रहकर निर्धनता से मुक्ति पा सकें। फिर भी निर्धनता के भार में कमी लाने के लिये अधिकतम जोत सीमा कानूनों का ठीक से परिपालन करना तथा अधिशेष भूमि को भूमिहीनों में शीघ्र वितरित करना आवश्यक है। अधिशेष भूमि के वितरण में ढिलाई की बात सरकार भी स्वीकार करती है। सातवीं योजना में स्पष्टतः कहा गया है कि कानून और

प्रशासनिक रुकावटों के कारण घोषित अधिशेष भूमि और उसके वास्तविक कब्जे एवं वितरण में बहुत अन्तर रहा है। इस अन्तर को कम करने के लिए उपाय करने होंगे।

निर्धनों को आवंटित घटिया जमीन का सुधार

सघन खेती जिला विकास योजना (1960-61) और तत्पश्चात् सघन खेती परियोजना, हरित क्रान्ति एवं अधिक उपज किस्म कार्यक्रम आदि की शुरुआत करके सरकार ने तीव्र गति से खाद्यान्न के उत्पादन को बढ़ाने पर बल दिया। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत ऐसे जिलों, क्षेत्रों और जमीनों पर विभिन्न कृषि आदानों के प्रयोग को बढ़ावा मिला जहां अच्छे प्रतिफल मिल सकते थे। स्वभावतः अच्छी और अधिक उर्वरा शक्ति जमीनों पर विनियोजन बढ़ा और धीरे-धीरे देश खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हुआ। उपर्युक्त कृषि कार्यक्रमों का लाभ देश के सम्पन्न क्षेत्रों तथा प्रभावशाली एवं जागरूक किसानों को अधिक मिला। इससे कृषि उत्पादन में तो वृद्धि हुई लेकिन सामाजिक न्याय की प्राप्ति नहीं हुई। अब सामाजिक न्याय की प्राप्ति तथा गरीबी हटाओ कार्यनीति के तहत भूमिहीन गरीब व्यक्तियों को आवंटित घटिया किस्म की जमीनों के सुधार हेतु 1975-76 से एक केन्द्रीय योजना कार्यान्वित की जा रही है। प्रारम्भ में यह योजना उन क्षेत्रों तक सीमित थी जहां अन्य विशेष योजनाएं (लघु कृषक विकास कार्यक्रम, सीमान्त कृषक विकास कार्यक्रम, सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम आदि) नहीं चल रही थीं। बाद में इस योजना को सभी क्षेत्रों में लागू किया गया और वित्तीय सहायता सम्बन्धी राशियों में भी संशोधन होते रहे। इसके अन्तर्गत अब अनुदान के रूप में 2500 रुपये प्रति हैक्टेयर तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस योजना से यह स्पष्ट है कि सरकार अब ऐसे कृषि कार्यक्रम भी अपना रही है जिससे सामाजिक न्याय और निर्धनता निवारण के लक्ष्यों की प्राप्ति हो।

कृषि उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से खेती की सर्वोत्तम दशा अथवा कृषि आदानों का सर्वोत्तम प्रयोग तब होगा जबकि खेती की जाने वाली सभी जमीनों से सम-सीमान्त उपज की प्राप्ति हो। यह तभी सम्भव है जबकि एक अच्छी जमीन पर एक उचित अनुपात में विभिन्न कृषि आदानों का प्रयोग तब तक बढ़ाया जाये जब तक कि उस जमीन से प्राप्त सीमान्त उत्पादन उससे घटिया जमीन के सीमान्त उत्पादन के बराबर न हो जाये। यह स्थिति आने पर घटिया जमीन पर भी कृषि आदानों का प्रयोग बढ़ाना उचित होगा। कृषि आदानों के प्रयोग का उपर्युक्त क्रम अपनाने से ही, उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से खेती की सर्वोत्तम दशा की प्राप्ति या कृषि आदानों का सर्वोत्तम प्रयोग सम्भव है। इसके लिये सीमान्त स्तर पर कृषि आदानों की लागत तथा कृषि उत्पत्ति के मूल्य पर ध्यान देना आवश्यक है। जहां इन दोनों में समानता आ जाये वहां तक विभिन्न जमीनों पर कृषि आदानों का प्रयोग बढ़ाना आर्थिक दृष्टि से हितकारी है। उपर्युक्त सिद्धान्त पर ध्यान न देकर भूमिहीन निर्धनों को आवंटित घटिया जमीन के सुधार हेतु दिया जाने वाला अनुदान इस बात का परिचायक है कि विनियोजन के निर्धारण में सरकार का यह भ्रम अब तक दूर हो गया है कि विकास कार्यक्रमों के लाभ स्वतः गरीबों तक छन कर पहुंचेंगे। सातवीं योजना में भी, अधिकतम सीमा की अधिशेष भूमि जिन्हें सौंपी गई है उन्हें वित्तीय सहायता की स्कीम चालू रखने की बात की गई है। इस स्कीम के शुरू होने से लेकर छठी योजना के अन्त तक इस कार्यक्रम के अधीन केन्द्र सरकार ने राज्यों को 25.07 करोड़ रुपये दिये। छठी योजना में इस कार्यक्रम के लिए केन्द्रीय क्षेत्र में 30 करोड़ रुपये के परिव्यय की व्यवस्था की गई थी और इतनी ही राशि राज्यों द्वारा प्रदान की जानी थी। तथापि इन निधियों का वास्तविक उपयोग बहुत कम हुआ जिसका बड़ा कारण था कि राज्यों ने अपने भाग की व्यवस्था नहीं की और आवंटित साधनों के उपयोग प्रमाण-पत्र प्रस्तुत न किये जाने के कारण केन्द्रीय सहायता का धन नहीं दिया जा सकता। इससे स्पष्ट है कि निर्धनों के सहायतार्थ ऐसी योजनाओं के संदर्भ में राज्य सरकारों को अधिक सचेष्ट होने की आवश्यकता है, खासतौर से ऐसी स्थिति में जबकि गरीबी दूर करने के कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जा रही है।

भूमि का पुनर्वितरण

ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि को सबसे महत्वपूर्ण उत्पादक परिसम्पत्ति माना जाता है। गांवों के निर्धनों को यदि भूमि प्रदान कर दी जाये तो खेती करके वे अपनी आर्थिक स्थिति को सुधार सकते हैं। ऐसी स्थिति में अधिकतम जोत सीमा निर्धारण के फलस्वरूप उपलब्ध भूमि का गरीबों में आवंटन निर्धनता निवारण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। लेकिन पहले जैसा बताया जा चुका है, अधिकतम जोत

सीमा निर्धारण के फलस्वरूप उपलब्ध एवं आवंटित भूमि एक तो कम और दूसरे घटिया किस्म की है, जिन पर खेती करके निर्धनता से मुक्ति पाना कठिन है।

अधिकतम जोत सीमा निर्धारण के फलस्वरूप घोषित अधिक शेष भूमि यदि कम है तो यह प्रश्न प्रायः उठता है कि क्या अधिकतम जोत सीमा को पुनः घटाना और अधिक भूमि का ग्रामीण निर्धनों में पुनर्वितरण करना उचित है? इस सम्बन्ध में दाण्डेकर और रथ का स्पष्ट विचार है कि ग्रामीण निर्धनता की समस्या भूमि के पुनर्वितरण से हल नहीं होगी। उनके अनुसार 'भूमि का पुनर्वितरण इसका समाधान नहीं है और इसका सीधा कारण यह है कि भूमि इतनी अधिक नहीं है कि इसमें सभी लोग अपेक्षित निम्नतम का उपार्जन कर सकें। हाल की प्राविधिक प्रगति ने देश के कृषि विकास को जो नई गति दी है वह भी इससे अवरुद्ध होगी और इससे खेती पीछे गतिहीनता की स्थिति में पहुंच जायेगी। इस विचार के विरुद्ध एक वैकल्पिक सुझाव यह दिया जाता है कि भूमि का पुनर्वितरण वैयक्तिक स्वामित्व एवं वैयक्तिक कृषि प्रणाली के सन्दर्भों में न करके यदि संयुक्त स्वामित्व तथा सामूहिक खेती के सन्दर्भ में किया जाये तो इससे जोतें भी अनार्थिक नहीं होंगी तथा नयी कृषि प्राविधियों के प्रयोग के लिये भी वातावरण रहेगा।

देश की वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक दशाओं एवं शक्तियों पर यदि ध्यान दिया जाय तो विद्यमान शासन प्रणाली के अन्तर्गत संविधान में परिवर्तन करके कृषि भूमि के वैयक्तिक स्वामित्व को खतम करना अथवा जोत की अधिकतम सीमा को बहुत हद तक घटाना सम्भव नहीं है। आर्थिक दृष्टि से यदि देखा जाये तो उपर्युक्त दोनों स्थितियां हितकारी नहीं होंगी। जहां तक सामूहिक खेती का प्रश्न है, भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की उपलब्धियां और अनुभव हमें कृषि में वैयक्तिक स्वामित्व के समापन की सीख नहीं देते, मुख्यतः ऐसी दशा में जबकि आज भी भारत में कृषि हद तक एक जीवन पद्धति है।

भूमि में सीमितता का गुण है। इसे बढ़ाया नहीं जा सकता। कृषि पर जनसंख्या का भार निरन्तर बढ़ रहा है। परिवारों का विघटन हो रहा है और जोतें छोटी होती जा रही हैं। ऐसी परिस्थिति में निर्धन परिवारों को इतनी भूमि प्रदान करना कि वे गरीबी की रेखा से ऊपर उठ सकें एक दिवा स्वप्न की बात लगती है।

चूंकि, सिंचित भूमि तथा गैर-सिंचित भूमि के लिए अधिकतम जोत की सीमाएं अलग-अलग हैं इसलिए सिंचाई सुविधाओं के विस्तार के फलस्वरूप नये सिंचित क्षेत्रों में अधिकतम जोत की सीमा को घटा कर कुछ और अधिशेष भूमि की प्राप्ति हो सकती है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में यह कहा भी गया है कि 'राज्यों को खासतौर से नियन्त्रण क्षेत्रों में और अन्य नये सिंचाई क्षेत्रों में अधिकतम सीमा की अधिशेष भूमि का पुनः निर्धारण करना होगा। लेकिन देश में पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत सिंचित क्षेत्र के विकास की दर (2.1 प्रतिशत प्रतिवर्ष) को यदि देखा जाये तो यह जनसंख्या के विकास की दर की अपेक्षा कम है। ऐसी स्थिति में नये सिंचित क्षेत्रों में अधिकतम जोत सीमा की अधिशेष भूमि में पुनर्निर्धारण से भी निर्धनता की समस्या का बहुत समाधान नहीं होगा। यदि भूमि के हस्तान्तरण और पुनर्वितरण की सम्भावनाएं बहुत अधिक नहीं हैं तो निर्धनों की अर्थिक दशा में सुधार मुख्यतः इस बात पर निर्भर है कि उनके लिए अन्य उत्पादक परिसम्पत्तियों एवं लाभप्रद रोजगार के अवसरों की व्यवस्था से तथा उनकी सामाजिक-आर्थिक दशा के सुधार हेतु किये जाने वाले विभिन्न प्रयासों और कार्यक्रमों से उनकी वास्तविक आमदनी और मानसिक तथा शारीरिक क्षमताओं में वृद्धि कहां तक होती है।

द्वारा, डॉ. ईश्वरदत्त सिंह
आवास सं.-4
काशी विद्यापीठ, वाराणसी-2

भारत में ग्रामीण आवास के आयाम

आई. उदय भास्कर रेड्डी

मानव की मूल आवश्यकताओं में भोजन और कपड़े के बाद मकान की जरूरत होती है। मकान की व्यवस्था समग्र जीवन स्तर के सुधार के साथ निकट से जुड़ी हुई है क्योंकि इससे न केवल आवास की जरूरत पूरी होती है बल्कि इससे स्वास्थ्य, स्वच्छता और शिक्षा आदि में सुधार जैसे विकास के कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भी योगदान मिलता है। इसके अतिरिक्त, आवास कार्यों से रोजगार के अतिरिक्त अवसर मिलते हैं और स्वैच्छिक बचत को भी बढ़ावा मिलता है। इस बात के बावजूद कि आवास से जीवन स्तर में सुधार पर कई प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं, हमारे देश में इस क्षेत्र की सबसे अधिक अनदेखी हो रही है और शायद हमारे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में इस ओर बहुत कम ध्यान दिया जा रहा है।

आवास समस्या ने ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में मकानों की कमी, उनकी खस्ता हालत और मूल सुविधाओं के अभाव के रूप में एक गम्भीर स्थिति उत्पन्न कर दी है। उपरोक्त आयामों के रूप में ग्रामीण आवास की समस्या को समझने का इस लेख में प्रयास किया गया है।

मकानों की कमी की समस्या

मकानों की भारी कमी वास्तव में, भारत में आवास का सबसे स्पष्ट पहलू है। ग्रामीण आवास का मामला एक गम्भीर चुनौतीपूर्ण है और तात्कालिक समस्याओं में से एक है जिसकी ओर तुरन्त ध्यान दिए जाने की जरूरत है क्योंकि यह समस्या स्वरूप में विविध और आकार में विशाल है। पिछले कुछ वर्षों से एक ओर जनसंख्या में तेजी से वृद्धि और कम दर से मकानों के निर्माण और दूसरी ओर स्वरूप और मात्रा के रूप में अपर्याप्तता के कारण इस समस्या में काफी वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण क्षेत्रों में बाढ़ और आग की समस्या तथा संयुक्त परिवारों में बंटवारों ने भी आवास की समस्या में लगी आग में घी का काम किया है। निर्धनता की भांति, मकानों की कमी एक पारस्परिक समस्या के रूप में सिद्ध हुई है और योजना-दर-योजना भारतीय वास्तविकता का स्थायी स्वरूप बन गयी है। मकानों से वंचित रह जाने के दोनों स्वरूप आपस में जुड़े हुए हैं। आश्रय की कमी अथवा इसके स्तर में धीरे-धीरे गिरावट गरीबी का एक कभी अलग न हो सकने वाला अंग बन गई है। आवास व्यवस्था पर गरीबी के प्रभाव को दिखाना बहुत आसान है जो तालिका-1 में दर्शायी गई मकानों की बढ़ती हुई कमी से स्पष्ट प्रकट होती है

तालिका-1 ग्रामीण भारत में मकानों की कमी

वर्ष	* कमी (करोड़ में)	सूचकांक
1971	1.16	100.00
1981	1.61	138.80
1983	1.74	150.00
1985	1.88	162.00
1990	2.23	192.00

* मकानों की कमी की गणना कुल जरूरतमंद परिवारों की संख्या से प्रयोग किए जाने की स्थिति वाले मकानों (पक्के, कच्चे पक्के और काम चलाऊ कच्चे मकान) को घटाकर की गई है।

स्रोत: राष्ट्रीय भवन संगठन, हैंडबुक हाउसिंग स्टेटिस्टिक्स, 1982-83 नई दिल्ली पृष्ठ 21-22

आंकड़ों से पता चलता है कि पिछले 20 वर्षों में मकानों की कमी बराबर बढ़ी है जो 1971 में 1.16 करोड़ यूनिटों से 1981 में 1.61 करोड़ हो गई है और इसके 1991 तक 2.23 करोड़ यूनिट हो जाने की सम्भावना है। मकानों की कमी की समस्या को हल करने के लिए राष्ट्रीय भवन संगठन ने अनुमान लगाया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति वर्ष औसतन 35 लाख मकान बनाने होंगे अथवा उनका सुधार करना होगा जिसके लिए प्रति यूनिट 6000 रुपये की औसत लागत से लगभग 2100 करोड़ रुपये के निवेश की आवश्यकता होगी।

मकानों का स्तर: यह अनुमान लगाया गया है कि विश्व में लगभग 50 से 60 प्रतिशत जनसंख्या ऐसे मकानों

में रहती है जो असंतोषजनक हैं, घटिया तरीके के बने हुए हैं, उनमें पूरी सुविधायें नहीं हैं और उनमें पारिस्थितिक दृष्टि से स्वीकार न किए जाने वाले लक्षण विद्यमान हैं। यह भी कहा गया है कि मकानों की समस्या बड़े शहरों और नगरों में कहीं अधिक गम्भीर है और ऐसी स्थिति गांवों में नहीं है। लेकिन यह बात सही नहीं है। हम यह देख सकते हैं कि मकानों और आवासों की स्थिति नगरों की तुलना में गांवों में कहीं अधिक खराब है। शहरों में यह समस्या कम स्थान और उनकी आवश्यकताओं के हिसाब से कम आनुपातिक हो सकती है। लेकिन गांवों में आवास की समस्या बढ़ती हुई गन्दी बस्तियों के रूप में ही नहीं है बल्कि वे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी हैं और उनका निर्माण बेतरतीब है, असंतोषजनक है। मकानों के स्तर को तालिका-II में दर्शाया गया है।

तालिका- II ग्रामीण भारत में मकानों के ढांचे के स्तर के रूप में मकानों का वितरण

ढांचे का स्तर	1961	1971	1981
पक्का मकान	13.0	19.0	23.0
कच्चा पक्का मकान	37.0	37.0	43.5
ठीक किया जा सकने वाला कच्चा मकान	38.0	32.0	23.4
ठीक न किया जा सकने वाला कच्चा मकान	12.0	12.0	10.1

हालांकि आंकड़े यह दर्शाते हैं कि पिछले कुछ वर्षों से मकानों के ढांचों में कुछ सुधार हुआ है। फिर भी, अभी गांवों में एक चौथाई मकान पक्के हैं। जबकि एक तिहाई (अर्थात 34.5 प्रतिशत) मकानों की दोनों दीवारें और छत कच्ची हैं और उनमें अधिक समय तक चलने वाली टिकाऊ सामग्री नहीं लगी हुई है, उनमें छप्पर, गारा मिट्टी, पत्तियां आदि का इस्तेमाल किया गया है और अन्य 43.5 प्रतिशत मकानों की या तो छतें अथवा दीवारें कच्ची हैं। इस प्रकार, कुल आवास भण्डार का लगभग तीन चौथाई भाग रोजाना की अनिवार्यताओं को पूरा नहीं करता है और ग्रामीण क्षेत्रों में आवास की समस्या को प्रकट करता है।

मकानों की खस्ता हालत, अधिकांश मकानों में खिड़कियों और रोशनदानों की कमी से समस्या और भी विकट हो जाती है। चूंकि ग्रामीण क्षेत्रों में मकान बनाने पर नियंत्रण रखने के लिए कोई निर्धारित विनियम नहीं हैं, इसलिए गांवों में मकानों का विकास बेतरतीब और अवैज्ञानिक ढंग से हुआ है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में मकानों की हालत रिहायसी मकानों की अनिवार्य भौतिक और सामाजिक आवश्यकताओं से वंचित है। विद्यमान मकानों की स्थितियां एक स्वास्थ्य प्रद जीवन बसर करने के अनुरूप नहीं है। अधिकांश मकान मात्र आश्रय प्राप्त करने के लिए बनाए गए हैं और निर्माण संरक्षण की दृष्टि से किया गया है अर्थात मकानों का निर्माण छोटी जगह में किया गया है जिसमें हवा के आदान प्रदान के साधन बहुत कम हैं। ज्यादातर मामलों में मकानों की ऊंचाई बहुत क्रम है और उसमें एक व्यक्ति ढंग से खड़ा भी नहीं हो सकता। इसके अलावा, चूंकि अधिकांश मकानों की छतों और दीवारों में अच्छी सामग्री का इस्तेमाल नहीं होता है इसलिए ये मकान वर्षा के मौसम में संरक्षण नहीं दे सकते।

निम्न स्तर की बुनियादी सेवायें

अगर व्यापक दृष्टि से देखें तो बुनियादी सेवाओं के बिना कोई भी मकान पूरे नहीं कहे जा सकते। गांव में बुनियादी सेवाओं की स्थिति निराशाजनक है। यह अनुमान लगाया गया है कि प्रत्येक पांच मकानों में से चार में कोई बुनियादी सुविधायें नहीं हैं। उनमें पर्दे का अभाव है और नहाने तथा शौचालय आदि की कोई व्यवस्था नहीं है। स्वच्छ पेयजल के उपलब्ध न होने और मल व्ययन की निकासी के उचित साधन न होने से ग्रामीण क्षेत्रों के जनजीवन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

सभी मूल सुविधाओं में प्रत्येक के लिए पानी सबसे जरूरी वस्तु है लेकिन दुख की बात है कि हमारे 6 लाख से अधिक गांवों में से बहुत से गांव अनेक वर्षों से पानी की कमी का सामना कर रहे हैं। संरक्षित जल सप्लाई अर्थात नलों द्वारा पानी की उपलब्धता केवल 10.29 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को है। अन्य साधन जिनसे प्रदूषण का जोखिम या खतरा रहता है वे हैं कुएं (61.62 प्र.) नलकूप (16.21 प्रतिशत), तालाब तथा जोहड़ (3.38 प्रतिशत), नदियां झील आदि (9.29 प्रतिशत) इस प्रकार 90 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को पीने का दूषित पानी मिलता है जिससे

तरह-तरह की बीमारियां बढ़ती हैं और जो शिशुओं और बच्चों की बीमारी तथा मृत्यु का मुख्य कारण हैं। इसके अलावा 92 प्रतिशत परिवारों के लिए कोई निर्मित शौचालय नहीं है। इससे महिलाओं को जिन्हें शौच के लिए घरों से बाहर जाना पड़ता है अपनी मान मर्यादा की समस्याओं का सामना करने के अलावा बीमारियों के रूप में गम्भीर परिणाम भी भुगतने पड़ते हैं। अधिकांश गांवों में नालियों की कोई सुविधायें नहीं है जिसकी वजह से गन्दा पानी गांव की गलियों में बहता रहता है जिससे कीचड़ और गन्दगी होती है। सफाई सुविधाओं की कमी के अलावा ज्यादातर घरों में धुंए की निकासी की कोई व्यवस्था नहीं होती जिससे मकानों में प्रदूषण बढ़ता है।

स्वच्छता सुविधाओं की कमी की परिस्थितियों में स्वास्थ्य से सम्बन्धित अनेक समस्यायें उत्पन्न होती हैं। अच्छी जल निकासी की सुविधायें न होने पर गांवों में बरसात के मौसम में मच्छरों को पनपने का अच्छा अवसर मिल जाता है और गांवों में गन्दगी का साम्राज्य होता है जिससे काम के दिनों में विशेष रूप से बुवाई और कटाई के मौसमों में लोग बीमार हो जाते हैं। जिससे उनकी आय में काफी कमी आ जाती है और साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे बच्चों की मृत्यु दर भी बढ़ जाती है।

उपरोक्त विचार विमर्श से प्रकट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आवास की समस्या ने खतरे की स्थिति का रूप धारण कर लिया है। इसलिए ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में ग्रामीण आवास को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिससे न केवल मकानों की समस्या का समाधान होगा बल्कि लाभकारी रोजगार मिल सकेगा। क्रय शक्ति में वृद्धि होगी और गांवों का समग्र विकास होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में मकानों की स्थिति सुधारने के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपायों में निम्नलिखित शामिल हैं :–

1. अनुसूचित जातियों, जनजातियों और भूमिहीन श्रमिकों जैसे ग्रामीण जनसंख्या के पता लगाए गए उपेक्षित वर्गों को उनकी क्षमता अनुसार आश्रय प्रदान करने के लिए विशेष कार्यक्रम बनाना।
2. तकनीकी सलाह, स्थानीय तौर पर उपलब्ध सामग्री का बेहतर उपयोग, नमूना मकानों के प्रदर्शन और कुछ हद तक वित्त की व्यवस्था के रूप में मकान के निर्माण के रूप में सहायता का प्रबन्ध करना।
3. समग्र जनजीवन में सुधार के लिए सम्पर्क सड़कों, बिजली तथा पीने के पीने के कुंओं की सुविधायें दी जानी चाहिए।
4. कम से कम 50 प्रतिशत ऐसी ग्रामीण जनसंख्या को जिनके पास मकान नहीं हैं, आवासीय कैम्पों का प्रबन्ध किया जाना चाहिए जिससे उन्हें आश्रय मिल सके और इस प्रकार उनके गांव से शहर की ओर जाने को कम किया जा सके।
5. गांव के स्तर पर स्वयंसेवी प्रयासों के द्वारा ग्रामीण मकानों में स्वच्छ शौचालयों की व्यवस्था का प्रयास किया जाना चाहिए। कुछ क्षेत्रों में कम लागत वाले साधारण वाटर-सील शौचालयों का डिजाइन विकसित किया गया है। ऐसी सफाई सुविधाओं के प्रयोग को अपनाने में गांव की संस्थाओं को सहायता देने के लिए बड़े पैमाने पर विस्तार प्रयास किए जाने चाहिए। स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार इस डिजाइन में संशोधन किया जा सकता है।

अन्त में, जीवन यापन और गरीबों के कल्याण के लिए अनिवार्य बुनियादी सुविधाओं के साथ मकानों की व्यवस्था न केवल एक पूर्व अपेक्षित है बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में मानव के सुनियोजित विकास के लिए भी अत्यन्त आवश्यक है।

अनुवाद : किरण गुप्ता

बारानी खेती : प्रगति और संभावनायें

डॉ. बद्री बिशाल त्रिपाठी

भारत में स्वतंत्रता के बाद विशेषकर नियोजन काल में कृषि विकास को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया। इसी परिप्रेक्ष्य में प्रथम पंचवर्षीय योजना के विकास कार्यक्रमों में कृषि विकास को सर्वोच्च वरीयता दी गयी। अन्य पंचवर्षीय-योजनाओं में भी कृषि विकास के लिये पर्याप्त धनराशि व्यय की गयी। भारत में कृषि विकास कार्यक्रमों के निष्पादन के अनुभव उत्साहवर्धक रहे हैं। कृषि में संस्थागत और तकनीकी सुधारों के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन और उत्पादिता बढ़ी है। कृषि के परंपरावादी स्वरूप में परिवर्तन आया है। परन्तु कृषि क्षेत्र की यह प्रगति मुख्य रूप से सिंचित क्षेत्रों तक ही सीमित है। सिंचित क्षेत्रों की कृषि प्रणाली में सुधार के विशेष प्रयास किये गये हैं। शुष्क क्षेत्रों की कृषि समस्याओं के समाधान हेतु विशेष प्रयास नहीं किये जा सके हैं। इसलिये भारतीय कृषि विकास प्रयासों के समक्ष सबसे प्रमुख चुनौती शुष्क क्षेत्रों में कृषि उत्पादन और उत्पादिता बढ़ाने की है।

शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों की कृषि प्रणालियों और फसल प्रारूप को शुष्क कृषि प्रणाली या बारानी खेती कहा जाता है अवधाणात्मक आधार पर बारानी खेती प्रणाली से आशय उस कृषि प्रणाली से है जो अत्यन्त कम वर्षा वाले और सुनिश्चित सिंचाई सुविधा रहित क्षेत्रों में अपनाई जाती है। अत्यन्त, अनिश्चित और छिट-पुट वर्षा वाले क्षेत्रों की कृषि प्रणाली फसल संरचना और कृषि निवेश सिंचित क्षेत्रों की तुलना में पृथक होते हैं। इन शुष्क क्षेत्रों की कृषि को कभी-कभी वर्षा पर निर्भर कृषि प्रणाली भी कहा जाता है।

भारत के सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र के एक बहुत बड़े भाग में वार्षिक वर्षा अत्यन्त कम और अनिश्चित है। यह अनुमान किया गया है कि भारत में 120 जिले इस प्रकार हैं जिनमें वर्षा अपेक्षाकृत कम है। इन जिलों में सिंचाई सुविधाओं का भी सम्यक विकास नहीं हो सका है। इन समस्त जिलों में वार्षिक वर्षा का औसत 1125 मिली मीटर वार्षिक से कम है जबकि फसल उत्पादन के लिए प्रतिवर्ष 1125 मिली मीटर से अधिक वर्षा अपेक्षित है। इन अपेक्षाकृत कम वर्षा वाले जिलों में 68 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र है जो शुद्ध बोये गये क्षेत्र का लगभग 50 प्रतिशत भाग है। शुष्कता की स्थिति वाले उक्त जिले मुख्य रूप से राजस्थान, गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र, पश्चिमी घाट का वृष्टि छाया प्रदेश के जिलों में शुष्कता की सघनता अधिक है। अति शुष्कता वाले इन क्षेत्रों में 25 जिले हैं जिनमें 375 मिली मीटर से 750 मिली मीटर तक वर्षा होती है। इनमें कुल बोये गये क्षेत्र का अत्यन्त कम भाग सिंचित है। इस क्षेत्र में फसल विकास अत्यन्त कठिन और जोखिम पूर्ण है। इसके अतिरिक्त शुष्कता वाले कुल 128 जिलों में 12 जिले इस प्रकार हैं जिनमें सिंचाई सुविधा का तीव्र प्रसार हुआ है। इनमें कुल बोये गये क्षेत्र का लगभग 30 प्रतिशत भाग सिंचित है। अतः इनकी कृषि अधिक समस्या ग्रस्त नहीं हैं। इनकी कृषि प्रणाली अधिक जटिल और जोखिम पूर्ण नहीं है। समस्त शुष्क जिलों में अवशिष्ट 91 जिले इस प्रकार हैं जिनमें फसल विकास की पर्याप्त संभावना विद्यमान है। उक्त 91 जिले मुख्य रूप से मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, हरियाणा तथा तमिलनाडु के कुछ भागों में स्थित है। इन क्षेत्रों के उक्त जिले अति विशिष्ट बारानी खेती के क्षेत्र हैं। इन 91 जिलों में कुल 42 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र हैं। इनमें से केवल 5 मिलियन हैक्टेयर अर्थात 11.9 प्रतिशत क्षेत्र ही सिंचित है। इन जिलों के विभिन्न भागों में 750 से 1125 मिली मीटर तक वर्षा होती है। इन जिलों की कृषि को सक्षम और लाभदायक बना सकने की संभावनायें हैं।

शुष्क क्षेत्रों में अल्प और अनिश्चित वर्षा के कारण कुल मिलाकर शश्य का अस्तित्व अत्यन्त कम होता है। वर्षा की कमी और अनिश्चितता के कारण कृषकों में असुरक्षा और जोखिम का वातावरण बना रहता है। इसी कारण बारानी खेती वाले क्षेत्रों में कृषक बीज, खाद, उर्वरक पौध संरक्षण आदि पर पूंजी लगाने में डरते हैं। यह प्रवृत्ति कृषि उत्पादन में पुनः अधिक कमी लाती है। यह अनुमान है कि भारत में कुल कृषि योग्य क्षेत्र का लगभग 50 प्रतिशत भाग बारानी खेती के अंतर्गत है।

शुष्क कृषि क्षेत्रों में फसल उत्पादन कम होने के

साथ-साथ एक अन्य अपेक्षाकृत अधिक गंभीर समस्या भूमि क्षरण की है जिसकी क्षतिपूर्ति किया जाना संभव नहीं है। शुष्क कृषि वाले क्षेत्रों शश्य विकास अत्यन्त कम होने के कारण भूमि का बाह्य आवरण खुला रहता है। इस कारण वायु और पानी के कारण तीव्र भूमि कटाव होता है। मिट्टी की उर्वर सतह वायु और पानी के साथ निकल जाती है। भूमि कटाव की समस्या देश में अत्यन्त जटिल होती जा रही है। यह अनुमान है कि देश में 17.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र हैं जिसमें से 3.5 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र वायु कटाव से प्रभावित है। वायु कटाव से प्रभावित क्षेत्र मुख्य रूप से शुष्क कृषि वाले क्षेत्रों में हैं।

शुष्क कृषि क्षेत्रों पर फसल उत्पादन बढ़ाने और भूमि को कटाव से बचाने के लिये यह आवश्यक है कि यहाँ बारानी कृषि प्रणाली की उन्नत विधियों को बढ़ावा दिया जाये। इससे भूमि संसाधन का समुचित उपयोग होगा और भूमि में नमी को सुरक्षित रखा जा सकेगा। शुष्क कृषि क्षेत्रों की कृषि सुधार के लिये जो कार्यक्रम सरकार द्वारा चलाये गये हैं उनसे यह स्पष्ट होता है कि इनके द्वारा न केवल भूमि संरक्षण में सहायता मिली है अपितु कृषि प्रणाली को भी विकसित करने में मदद मिली है। वर्षा पर निर्भर इन क्षेत्रों में मुख्य रूप से दालें, तिलहन और व्यापारिक फसलें जैसे कपास एवं मूंगफली उगाई जाती हैं। इन फसलों की कीमतें हाल के वर्षों में अपेक्षाकृत अधिक बढ़ी हैं। इस कारण इन फसलों की उत्पादिता बढ़ाकर इन क्षेत्रों के कृषकों की आर्थिक स्थिति में स्थायी सुधार किया जा सकता है। इन क्षेत्रों में दाल और तिलहन जैसी महत्वपूर्ण फसलों, औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण कपास और मूंगफली जैसी फसलों तथा ज्वार, बाजरा और मक्का जैसी अनाज वाली फसलों का विकास अधिक सक्षमता पूर्वक किया जा सकता है।

बारानी कृषि के विकास के लिये सरकार विविध प्रयास कर रही है। 20 सूत्री कार्यक्रम में बारानी खेती के विकास को सम्मिलित किया गया है। 1986 के इस 20 सूत्री कार्यक्रम के दूसरे सूत्र में कहा गया है कि वर्षा पर निर्भर कृषि को विकसित करने के लिये और भूमि में नमी बनाये रखने के लिये तकनीकी सुधार और भूमि तथा जल संसाधनों की सम्यक व्यवस्था की जायेगी। यह भी कहा गया है कि शुष्क भूमियों के लिये उन्नत बीजों का विकास और उनका समुचित वितरण किया जायेगा, सूखे की संभावनाओं को कम करने का प्रयास किया जायेगा। बारानी खेती के विकास की राष्ट्रीय नीति के रूप में यह स्वीकृत किया गया है कि एक उपयुक्त स्थान पर थोड़ी-सी भूमि को जल विभाजक के रूप में विकसित किया जाये। केन्द्र सरकार ने राज्यों एवं केन्द्र शासित क्षेत्रों से कहा है कि वे इन क्षेत्रों में उत्पादन स्तर तेजी से बढ़ाने के लिये हर संभव प्रयास करें। बारानी खेती की तकनीक विकसित करने के लिये 1983-84 से केन्द्रीय क्षेत्र में एक अन्य योजना चलायी गयी है जो मुख्य रूप से इस सिद्धान्त पर निर्भर है कि सूखे वाले दिनों में फसलों की सिंचाई के लिये सुविधायें उपलब्ध करायी जाये, विशेषकर तब जब मानसून की वर्षा जल्दी समाप्त हो जाये। उद्देश्य यह है कि वर्षा पर निर्भर रहने वाले क्षेत्रों में वैज्ञानिक भूमि प्रबन्ध और सम्यक जल प्रबन्ध के माध्यम से उत्पादन बढ़ाया जाये। यह योजना 5 करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता से 15 राज्यों के 19 जिलों में चलाई जा रही है। यह प्रयास किया जा रहा है कि समस्त शुष्क क्षेत्र को भूमि संरक्षण और कृषि विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत लाया जाये।

शुष्क कृषि क्षेत्रों का विकास सातवीं योजना के प्रमुख कार्यक्रमों में से है। गरीबी, बेरोजगारी और क्षेत्रीय विषमता के निवारण हेतु तथा शुष्क क्षेत्रों या वर्षा पर निर्भर क्षेत्रों की कृषि विकसित करने के लिये अधिक महत्वाकांक्षी योजनायें तैयार की गयी हैं। इन योजनाओं में मुख्य जोर इस बात पर दिया जा रहा जिससे कृषि कार्य में निहित जोखिम का तत्व कम हो सके। स्थिति विशिष्ट प्राविधिक उपागमों, कृषि निवेशों और कृषि सेवाओं को विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। पनधारा क्षेत्र को विकास की मूल इकाई मानकर क्षेत्रीय विकास उपागम पर विशेष जोर दिया जा रहा है। व्यष्टि स्तर पर भूमि और नमी संरक्षण, भूमि उद्धरण बाँधियों का निर्माण, सुधरे हुये और सूखा प्रतिरोधक बीजों का विकास, उर्वरक और बीज को साथ-साथ जमीन में डालने की विधि और सुधरे हुये कृषि यंत्र विकसित किये जा रहे हैं। राज्यों के प्रयास को मजबूत बनाने के लिये केन्द्र सरकार द्वारा एक राष्ट्रीय शुष्क भूमि वर्षा पर निर्भर की परियोजना तैयार की है। भूमि विकास, जल का प्रबन्ध कृषि यंत्र और मशीनों का प्रारूप तैयार करना और विकसित करना, वृक्षारोपण, चरागाह विकास, मानव शक्ति का विकास और अस्थापनागत सुविधाओं का विकास शुष्क कृषि क्षेत्रों के लिये बनायी गयी केन्द्रीय परियोजना के संघटक तत्व हैं। धीरे-धीरे यह प्रयास किया जायेगा कि

समस्त शुष्क कृषि क्षेत्र इन उपचारात्मक उपायों के अंतर्गत आ जायें।

उपचारात्मक माध्यम

शुष्क कृषि क्षेत्रों की कृषि विकसित करने के समग्र कृषि उत्पादन की वृद्धि आगामी वर्षों के लिये अत्यन्त आवश्यक है। यह अनुमान है कि भारत में सन् 2000 तक लगभग 200 मिलियन टन अनाज की आवश्यकता होगी। शुष्क कृषि क्षेत्रों में फसल उत्पादन बढ़ाकर उक्त लक्ष्य को सरलता पूर्वक प्राप्त किया जा सकता है। इन क्षेत्रों में फसल उत्पादन की वृद्धि इसलिये भी आवश्यक है ताकि कृषकों और उक्त क्षेत्रों के अन्य निवासियों की आर्थिक स्थिति सुधारी जा सके। साथ-साथ सिंचित और शुष्क क्षेत्रों के निवासियों में विद्यमान आय अन्तराल को कम किया जा सके। शुष्क कृषि क्षेत्रों में उपज बढ़ाने और उनमें व्याप्त समस्याओं की सघनता को घटाने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं :–

(1) शुष्क कृषि क्षेत्रों की कृषि विकसित करने के लिये स्थिति विशिष्ट नवीन बीजों के विकास की आवश्यकता है। किसी प्रयोगशाला व कृषि संस्थान से विकसित बीज समस्त कृषि क्षेत्रों के लिये समान रूप से लाभदायक नहीं होते हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि शुष्क क्षेत्रों की परिस्थिति के अनुरूप शीघ्र पकने वाले कृषि बीजों का विकास किया जाये। इन क्षेत्रों में उत्पादन की जाने वाली मुख्य फसलें जौ, चना, मटर, कपास, तिलहन, अरहर, आदि हैं। इनके सक्षम और कम परिपक्वता अवधि वाले बीजों का प्रसार वरीयता के आधार पर किया जाना चाहिये। शुष्क कृषि क्षेत्रों की परिस्थितियां भी इन फसलों के अनुरूप होती हैं।

(2) जल प्रबन्ध की समुचित व्यवस्था शुष्क कृषि क्षेत्रों के कृषि विकास के लिये आवश्यक है। शुष्क कृषि क्षेत्रों में वर्षा के जल को एकत्र करने के लिये छोटे-छोटे तालाब बनाये जाने चाहिये। अतिरिक्त शुष्क कृषि क्षेत्रों में बंधी बनाकर पानी एकत्र किया जा सकता है। इससे सिंचाई और भूमि नमी की वृद्धि में सहायता मिलेगी। लघु सिंचाई योजनाओं का प्रसार इन क्षेत्रों के लिये लाभदायक होगा। इन क्षेत्रों में कहीं-कहीं जमीन के नीचे कड़ी चट्टाने हैं। अतः वहां पर कुओं एवं नलकूपों का प्रसार लाभदायक और व्यावहारिक नहीं रह जाता है।

अतः इनमें नहरों द्वारा सिंचाई व्यवस्था की जा सकती है। पशुपालन और उससे सम्बद्ध क्रियायें इन शुष्क क्षेत्रों के कृषकों के लिए लाभदायक हैं। चरागाह का विकास सुगमता

(5) सम्यक भूमि प्रबन्ध शुष्क कृषि क्षेत्रों के विकास की पूर्वापेक्षा है। भूमि प्रबन्ध के अंतर्गत भूमि संरक्षण, बंधी निर्माण, क्षारीयता को कम करना, भूमि उद्धरण, नमी संरक्षण आदि सम्मिलित हैं। यह अनुमान किया गया है कि भारत में 17.5 करोड़ हैक्टेयर भूमि समस्या ग्रस्त है। इसके लिये समुचित प्रयास की आवश्यकता है। भारत में 1979-80 तक कुल 2.34 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र भूमि संरक्षण कार्यक्रमों के अन्तर्गत लाया गया था। सातवीं योजना में 70 करोड़ हैक्टेयर में भूमि संरक्षण के लक्ष्य के बदले वास्तविक प्राप्ति 60 करोड़ हैक्टेयर रही है। इस प्रकार छठी योजना के अंत तक कुल 2.94 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र भूमि सुधार कार्यक्रमों के अन्तर्गत लाया गया है। सातवीं योजना में इसे अधिक व्यापक रूप में चलाया जा रहा है।

यदि भारत में शुष्क कृषि क्षेत्रों का समुचित विकास कर लिया जाये तो देश को खाद्य वस्तुओं का पर्याप्त अतिरेक उपलब्ध हो सकता है। कृषि वस्तुओं के निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है। उपज संभावना वाले इन शुष्क कृषि क्षेत्रों के संसाधनों का अनुकूलतम विदोहन न होना राष्ट्रीय क्षति है। अभी तक कृषि विकास कार्यक्रमों पर होने वाले व्यय का अधिकांश लाभ सुविधा सम्पन्न क्षेत्रों और सम्पन्न कृषकों को ही मुख्य रूप से मिला है। इस धारा की विपरीत दिशा में परिवर्तन की आवश्यकता है। साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि विकसित कृषि क्षेत्र इन शुष्क कृषि क्षेत्रों के विकास में योगदान करें।

पूर्वक यहां किया जा सकता है। उक्त शुष्क कृषि क्षेत्र सापेक्षिक रूप में बिरल आबादी वाले क्षेत्र हैं। भूमि पर जनसंख्या का दबाव अत्यन्त कम है। इसलिये चरागाह विकास के लिये भूमि की समस्या न होगी। भेड़ पालन, मुर्गी पालन और भारवाहक पशुओं का पालन इन क्षेत्रों के लिये अधिक लाभदायक और परिस्थिति के अनुरूप होगा।

(4) ग्रामीण क्षेत्र में गैर कृषि रोजगार अवसरों का प्रसार अपेक्षित है। इसके लिये स्थानीय संसाधनों का प्रयोग करने वाले कुटीर उद्योगों का विकास आवश्यक है। कई शुष्क कृषि क्षेत्र लकड़ी, खेर, औषधि वाली जड़ी बूटियां, तम्बाकू की पत्तियां, बीड़ी की पत्तियां आदि की दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न होते हैं यहां इनसे सम्बद्ध कुटीर उद्योगों को विकसित करना आवश्यक है।

78/3, बांध रोड, एलनगंज,
इलाहाबाद-211 002

महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले में भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के आवास हेतु अपनाई गई ग्रामीण आवास योजना

एस. एम. दहीवाले

देश की 1981 की जनगणना के अनुसार 6,29,929 परिवारों में से 2,00,342 व्यक्तियों के पास रहने को मकान नहीं हैं। इनमें से 73.58% लोग गांवों में रहते हैं। लेकिन अन्य क्षेत्रों के मुकाबले महाराष्ट्र राज्य में गृहहीन लोगों की संख्या 81.59% है। केन्द्रीय शहरी विकास मंत्री द्वारा हाल ही में दी गई सूचना के अनुसार देश के ग्रामीण क्षेत्रों में 1,88,00,000 मकानों की कमी है। इन आंकड़ों से समस्या की गंभीरता का पता चलता है।

जिला स्तर पर गांवों में मकानों की व्यवस्था करने सम्बन्धी, इस कार्यक्रम से सम्बन्धित आवास योजना की केन्द्रीय और राज्य सरकारों के स्तर पर समीक्षा की जाये।

पंचवर्षीय योजनाओं में मकानों के लिए व्यवस्था

आवास या मकानों की समस्या पर पंचवर्षीय योजनाओं में ध्यान दिया जाता है। यह ठीक है कि पंचवर्षीय योजनाओं में योजना आयोग ने सरकारी कर्मचारियों, कारखानों में काम करने वाले मजदूरों, सामुदायिक विकास खण्डों के कर्मचारियों तथा मध्यम तथा निम्न आय वर्ग के लोगों को सहायता देकर मकानों की व्यवस्था करने की ओर ध्यान दिया। लेकिन ग्रामीण समाज के कमजोर, साधनहीन लोगों जैसे अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के लोगो तथा अन्य लोगों की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया है जिनके पास रहने को घर नहीं हैं। तीसरी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण आवास कार्यक्रम को सामुदायिक विकास के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया लेकिन योजना आयोग ने इस बात पर असंतोष व्यक्त किया कि अधिकतर राज्यों में गांववासियों के इसमें रुचि नहीं लेने के कारण मकानों के निर्माण की दिशा में बहुत कम प्रगति हुई। चौथी पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग ने अनुसूचित जातियों, भूमिहीन कृषि मजदूरों तथा छोटे किसानों के लिए मकानों की व्यवस्था करने के लिए पचास करोड़ रुपये का प्रावधान किया। चौथी योजना की समीक्षा करते हुए योजना आयोग ने ग्रामीण आवास योजना पर कम धन राशि खर्च किये जाने की बात स्वीकार की।

लेकिन बाद में योजना आयोग ने दो स्तरों पर आवास योजना पर विचार किया। पहले मकान बनाने के लिए जमीन उपलब्ध कराना और फिर उन पर मकान बनवाना। इस प्रकार इस योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को जमीन देने की व्यवस्था की गई। 1972-73 से बारह करोड़ रुपये की एक योजना लागू की गई जिसके अन्तर्गत एक सौ पचास रुपये प्रति प्लाट की दर पर पचास हजार प्लाट उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। इसके लिए भूमि अधिग्रहण के वास्ते राज्यों और केन्द्र शासित क्षेत्रों को मूल्य की पूरी की पूरी धनराशि दी गई। पांचवीं योजना में एक अरब आठ करोड़ 16 लाख रुपये की राशि की व्यवस्था की गई है जिससे चालीस लाख भूमिहीन मजदूरों को मकान मुहैया कराये जाने की आशा थी। छठी योजना (1980-85) में योजना आयोग ने गांवों में 36 करोड़ 70 लाख मकान बनाये जाने के लिए एक अरब तिरासी करोड़ 50 लाख रुपये की धनराशि का प्रावधान किया। इसी योजना में गांवों में प्लाट देने के वास्ते एक करोड़ 70 लाख रुपयों की व्यवस्था की गई जिससे 68 लाख मकान बनाये जा सकें। सातवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास के लिए बनाये गये नये बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत महाराष्ट्र में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए एक लाख मकान बनाने का लक्ष्य रखा गया।

इस प्रकार पता चलता है कि योजना आयोग अथवा केंद्र सरकार ने कमजोर वर्गों के लिए मकानों की आवश्यकताओं को समझते हुए बाद में बनने वाली प्रत्येक योजना में अधिक धन राशि की व्यवस्था की।

महाराष्ट्र सरकार का आवास कार्यक्रम

महाराष्ट्र राज्य का आवास कार्यक्रम इस प्रकार बनाया गया है कि इसमें गरीब वर्ग के सभी भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को मकान उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है। महाराष्ट्र शासन ने ग्रामीण आवास कार्यक्रम की शुरूआत जमीन देकर इस पर झोंपड़ी बनवाने से की और आगे चलकर छप्पर की छत हटाकर टाइलें लगवाई गईं।

मकानों के लिए प्लाट देने की योजना

महाराष्ट्र सरकार के 1972 के परिपत्र में बताया गया कि सरकार ने राज्य में सभी भूमिहीन मजदूरों को तीन वर्ष के भीतर मकान बनाने के लिए जगह देने का निश्चय किया। इसके अनुसार सरकार ने ऐसे लगभग 10 लाख भूमिहीन मजदूरों के परिवारों को जमीन के प्लाट देने का प्रस्ताव किया जिनके पास मकान बनाने की अपनी जगह नहीं थी। भूमि उपलब्ध कराने के बारे में एक योजना बनाई गई जिसमें कुछ मानक तय किये गये। मकान के लिए जमीन आवंटित करते समय अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अधिसूचित जनजातियों तथा अन्य जातियों के बीच अंतर न करते हुए अनुसूचित जातियों को प्रमुखता देने की व्यवस्था की गई।

महाराष्ट्र सरकार की 19-7-1975 की आम समीक्षा में मकानों के लिए जमीन देने की योजना के सम्बन्ध में बताया गया कि 30 जून, 1974 तक दो लाख पांच हजार परिवारों को मकान बनाने के लिए जमीन के प्लाट दिये गये। सरकार ने निर्देश दिया कि उपलब्ध सरकारी ग्राम पंचायत भूमि में से प्लाटों के आवंटन तथा कब्जा देने का काम 15 अप्रैल, 1975 तक पूरा कर लिया जाये। लेकिन जिलाधीशों से मिली जानकारी के अनुसार कुल चार लाख पांच हजार परिवार योजना के अन्तर्गत जमीन पाने के हकदार थे जिनमें से दो लाख 54 हजार परिवारों को जून, 1975 के अंत तक जमीन के प्लाट दे दिये जाने थे।

मकान बनाने की योजना

जमीन पर बनाई गई झोपड़ियों के आवंटन की योजना को लागू करने के लिए 1972 में ऐसे लोगों का पता लगाया गया जो झोपड़ियों को प्राप्त करने के अधिकारी थे। ऐसे 4,97,547 लोगों की सूची बनाई गई । महाराष्ट्र शासन ने मार्च 1975 में आवंटित प्लाटों पर झोपड़ी बनाने का कार्यक्रम आरंभ किया था। इसके अन्तर्गत प्रत्येक जिले में 1,000 झोपड़ियां बनाने का परीक्षण कार्यक्रम शुरू किया गया।

निर्माण के सम्बन्ध में कुछ मानक तय किये गये। इनके अनुसार 150 रुपये प्रत्येक की मूल्य वाली 10" x 10" की साधारण झोपड़ी बनवाकर दी जानी थी और इन्हें प्राप्त करने वाले लोगों को मिट्टी, कंकड़-मिट्टी या और किसी सामान से दीवारें बनाकर ऊपर छप्पर की छत रखनी थी। योजनानुसार 31.5.1975 तक 25,000 झोपड़ियां बनकर तैयार हो गईं ।

लेकिन 1975 में सरकार का ध्यान उन 15,695 झोपड़ियों की ओर आकृष्ट किया गया जिन्हें आवंटियों ने इस्तेमाल नहीं किया। मई 1976 के अंत में ऐसी झोपड़ियां अनुपयुक्त पड़ी थीं। इसका कारण छतों का रिसना बताया गया। अतः जिलाधीशों से तत्काल मरम्मत कराने को कहा गया।

कार्यक्रम को जारी रखने के लिए वर्ष 1983 में 2 लाख चार हजार लोगों की सूची बनाई गई जो झोपड़ियां प्राप्त करने के अधिकारी थे। कुछ विशिष्ट समुदायों के स्तर को देखते हुए महाराष्ट्र सरकार ने उन्हें झोपड़ियों के आवंटन कार्यक्रम में शामिल कर लिया ।

झोपड़ियों का आवंटन

झोपड़ियों के आवंटन के लिए ग्राह्यता की निम्न शर्तें रखी गईं–

किसी प्रकार के सदस्यों के स्वामित्व में 1. कोई कृषि अथवा गैर-कृषि भूमि 2. कोई मकान न हो । 3. परिवार के सदस्य जीविकोपार्जन के लिए मुख्यतः अकुशल मजदूरी पर निर्भर हों । 4. परिवार के सदस्य वर्ष के अधिक समय में गांव/ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हों तथा 5. किसी की वार्षिक आय रुपये 4200/- (अर्थात रु. 350 प्रतिमा) से अधिक नहीं हो।

झोपड़ी बनाने की दरें

झोंपड़ी बनाने में काम आने वाले समान की कीमतों में वृद्धि को ध्यान में रखकर सरकार ने झोपड़ी बनाने की दर रु. 150/- से बढ़ाकर रु. 6000/- कर दी। इसका विवरण तालिका 1 में दिया गया है।

तालिका 1

झोपड़ी बनाने की बढ़ी हुई लागत

इस तारीख से	बढ़ी हुई दर
1. 11.3.1975	150/-
2. 19.7.1975	320/-
3. 15.7.1976	350/-
4. 16.11.1977	750/-
5. 7.3.1979	1500/-
6. 3.8.1980	2000/-
7. 1.4.1983	2700/-
8. 28.4.1985	6000/-

उपरोक्त योजनाओं से यह स्पष्ट होता है कि महाराष्ट्र सरकार समाज के कमजोर वर्गों के गृहहीन परिवारों के लिए आवास कार्यक्रम लागू करने में केंद्र सरकार से आगे रही है। इसके साथ ही उपरोक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि महाराष्ट्र सरकार आवास योजना के कार्यान्वयन के लिए निष्ठापूर्वक प्रयास कर रही है। अब हम यह देखेंगे कि कोल्हापुर जिला प्रशासन ने राज्य सरकार के इस कार्यक्रम को किस सीमा तक पूरा किया है।

लाभार्थी परिवारों की पहचान

यह तो बिल्कुल स्पष्ट है कि इस कार्यक्रम को अपने यहां लागू करते समय कोल्हापुर जिला प्रशासन (को.जि.प्र.) को राज्य सरकार द्वारा निर्धारित मानकों/व्यवस्थाओं का पालन करना था। इसके अनुसार को.जि.प्र. ने जिले के गांवों में ऐसे गृहहीन परिवारों का पता लगाया जो कार्यक्रम के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने के अधिकारी थे। आरंभ में 1972 में 6873 की पहचान की गई । बाद में 1979 में 1210 तथा 1983 में 4064 परिवारों का पता लगाया गया।

राज्य सरकार की यह नीति रही है कि कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का जो भी प्रतिशत हो, गृहहीन परिवारों के रूप में उन्हें अग्रता दी जानी है। इसके अनुसार लगता है कि को.जि.प्र. ने उनके कुल जनसंख्या अनुपात से अधिक संख्या में उन्हें शामिल किया है। कुल छांटे गये 12147 परिवारों में से 3248 अनुसूचित जातियों और 275 अनुसूचित जनजातियों से संबद्ध हैं। जिले की कुल जनसंख्या में उनका अनुपात क्रमशः 12.08 प्रतिशत तथा 1.09 प्रतिशत है जबकि कुल ग्राह्य परिवारों में यह क्रमशः 26.73 प्रतिशत तथा 2.26 प्रतिशत है जोकि अधिक है।

मकानों हेतु जमीन तथा मकानों का आवंटन

आवास कार्यक्रम के आरंभिक चरण में कुल 12,147 परिवारों का चयन किया गया जिनमें 3523 अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से सम्बद्ध थे। फिर मकानों के लिए जमीन के आवंटन के अन्तर्गत कुल मिलाकर 9438 परिवारों को जमीन दी गई जिनमें 1885 (19.9 प्रतिशत) परिवार अनुसूचित जातियों तथा 250 (2.6 प्रतिशत) परिवार अनसूचित जनजातियों से सम्बद्ध थे।

वास्तव में मकान निर्माण का कार्यक्रम वर्ष 1975 से आरंभ हुआ। मार्च 1986 के अंत तक कुल 8713 मकान बनाये गये और ग्राह्य परिवारों को उन्हें आवंटित भी कर दिया गया। बाकी 725 मकान कुल (9438) आवंटित भूमि प्लाटों पर बनाये जाने थे। जहां तक निर्माण कार्यक्रम का संबंध है 6854 मकान राज्य सरकार ने बनवाये तथा 1859 मकानों का निर्माण जिले की सहकारी चीनी फैक्ट्रियों ने कराया।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत विशेष कार्यक्रम

केन्द्र सरकार के नये बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत जिला स्तर पर ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधीन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उन लोगों के लिए जो गरीबी की रेखा से नीचे हैं, दिनांक 10 जून, 1985 के पत्र के जरिये एक आवास योजना शुरू की गई है। यह योजना ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अन्तर्गत चलाई जा रही है। आरंभ में 120 वर्ग फुट क्षेत्र के मकान के निर्माण का व्यय रु. 6000/- निश्चित किया गया था जिसे 5 नवम्बर, 1986 से बढ़ाकर रु 7800/- कर दिया गया।

कार्यान्वयन

कोल्हापुर जिले में राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम को लागू करने के लिए 1985-86 में अनुसूचित

जातियों और अनुसूचित जनजातियों से सम्बन्धित परिवारों के लिए 450 मकान बनाये जाने का लक्ष्य रखा गया था और 30 नवम्बर 1986 तक 448 मकान बनकर तैयार हो गये थे।

इनके अलावा भी 1985-86 में रु. 6000/- प्रति मकान के हिसाब से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के परिवारों के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत 180 मकान बनाये गये।

इस प्रकार 1983 तक प्राप्त आंकड़ों के अनुसार 2059 अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से संबद्ध परिवारों को लाभ मिला है। जिला विकास कार्यक्रम के अंग के रूप में संचालित राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत 630 और ऐसे परिवारों को मकान की सुविधाएं मिली हैं।

दो गांवों का निरीक्षण

सरकारी पत्रों के अनुसार आवास योजनाओं का कार्यक्रम संतोषप्रद ढंग से लागू किया गया जान पड़ता है। कार्यान्वयन का वास्तविक पता लगाने के लिए जिले में जिन-जिन स्थानों पर योजना कार्यक्रमों पर काम हो रहा हो वहां सभी जगह जाना तो कठिन है। फिर भी लेखक ने दो ऐसे गांवों का दौरा किया जहाँ ये कार्यक्रम कार्यान्वित किये जा रहे थे। ये गांव थे – पानहाला तालुका में कोडोली और हाटकानंगेल तालुका में मिंचे, जहां प्रदेश के राजस्व विभाग द्वारा तथा राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत मकान बनाये गये थे। वहां जो देखने को मिला उस बारे में निम्न टिप्पणी में बताया गया है :–

"लाभार्थी गांवों के भूमिहीन तथा गृहहीन परिवारों के लोग थे। मकानों का निर्माण निर्धारित मानकों के अनुसार किया गया था। लेकिन राज्य सरकार के आवास कार्यक्रम के अधीन बनाये गये मकानों के मुकाबले राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अन्तर्गत निर्मित मकान बेहतर बने थे। कालोनी मुख्य गांव के पास ही बनी थी। पीने के पानी, बिजली, आने-जाने के लिए सड़कों की व्यवस्था कोडोली में तो उपलब्ध थीं लेकिन मिंचे में बिजली की सुविधा नहीं मिली थी। कोडोली में लाभार्थी अनुसूचित जातियों के सदस्य, प्राचीन जनजातियों तथा ऊंची जाति के हिन्दू भी शामिल थे लेकिन मिंचे में लाभार्थी केवल अनुसूचित जातियों के सदस्य थे। कोई भी मकान खाली नहीं था। कोडोली में मकानों का आवंटन केवल जाति के आधार पर ही नहीं किया गया था, वहां किसी सीमा तक अलग-अलग जातियों का मिला जुला रूप था। अंतिम बात यह कि लेखक को लाभार्थियों ने बताया कि वे अपनी पहले वाली झोपड़ियों के मुकाबले आवंटित किये गये मकानों में बहुत संतुष्ट हैं।"

उपसंहार एवं सुझाव

गृहहीन आबादी की समस्या को हल करने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों ने चौथी पंचवर्षीय योजना के समय से ध्यान देना शुरू किया। तब से समाज के कमजोर वर्गों के लाभ के वास्ते लगातार आवास विकास कार्यक्रम चलाया जा रहा है। जहां तक कोल्हापुर जिले में कार्यक्रम के कार्यान्वयन का सम्बन्ध है यह संतोषप्रद तरीके से पूरा किया गया लगता है। इस में जिला अधिकारियों ने सरकार द्वारा निर्धारित मानदंडों का पालन किया है और नियमानुसार ग्राह्य लोगों की बाकायदा पहचान करके उन्हें रहने को आवंटित किया है। फिर, लाभार्थी भी मकानों से संतुष्ट हैं। अभी तक कमजोर वर्ग के लोगों से सम्बन्धित मकान-निर्माण कार्यक्रम को गरीबी-उन्मूलन का एक उपाय माना जाता है। इसे लागू करते समय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से सम्बन्धित वर्गों का उचित ध्यान रखा जाता है।

महाराष्ट्र सरकार ने अपने कार्यक्रम में विशिष्ट जनजातियों और उनकी उप-जनजातियों के परिवारों को भी शामिल किया है। राज्य में इन जनजातियों की बड़ी आबादी है। ये जनजातियां केवल अपने नामों से ही नहीं बल्कि अपनी जीवन शैली की दृष्टि से भी विशिष्ट हैं। अब कोई यह पूछे कि क्या मकान उपलब्ध कराने से वे अपने तौर-तरीके बदल दें तो इसका जवाब नहीं है। उनकी असली समस्या जीविकोपार्जन की है। मकान की नहीं। लेकिन यह केवल इन जनजातियों की समस्या नहीं होकर एक आम समस्या है। मकानों के साथ रोजगार को भी जोड़ा जाना चाहिए। अगर किसी व्यक्ति को जीविका कमाने का अच्छा साधन मिल जाये तो वह रहने के लिए मकान की व्यवस्था स्वयं कर सकता है।

(शेष पृष्ठ 25 पर)

दूसरी किस्त

सार्वजनिक कोष कार्यक्रम नगालैंड के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन अभियान

अ. मा. गोखले
संयुक्त सचिव

प्रस्तुत रिपोर्ट ग्रामीण विकास विभाग में इस समय संयुक्त सचिव श्री अ.मा. गोखले ने 1982 में उस समय तैयार की थी जब वे नगालैंड सरकार में ग्रामीण विकास सचिव थे।

रिपोर्ट में 1977 से 1980 तक नगालैंड के सभी गांवों में "ग्राम विकास बोर्ड" गठित करने की प्रक्रिया व 1982 के अंत तक सबसे निचले स्तर की इन संस्थाओं के कामकाज की चर्चा की गयी है। यह चर्चा अनेक अधिकारियों के क्षेत्र में अनुभवों पर आधारित है और इस विश्वास के साथ यहाँ प्रस्तुत की जा रही है कि क्षेत्र में विषय विशेषज्ञता के लिये कार्यरत अधिकारियों के लिये यह उपयोगी साबित होगी।

ग्राम विकास बोर्डों के 1988 तक के कामकाज का संक्षिप्त विवरण रिपोर्ट के साथ जोड़ा गया है जो इसकी अंतिम किस्त के साथ प्रकाशित किया जायेगा।

हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि गांव की सार्वजनिक कोष समिति पर कुछ प्रभावशाली लोग नियंत्रण न कर लें।

इस सम्बन्ध में एक सुखद तथ्य यह है कि कोई नगा कितना भी सम्पन्न हो, वह अपने गाँव के हितों के विरूद्ध कोई काम नहीं करेगा। दूसरी ओर, कोई नगा कितना ही फटेहाल हो, वह गांव सभा में अपनी बात जोरदार ढंग से रख देता है। इस सुखद स्थिति को ध्यान में रखते हुये सार्वजनिक कोष समिति के गठन के लिये निम्नलिखित विधि अपनायी गयी–

क्षेत्र का उपायुक्त या उसका कोई प्रतिनिधि गांव में जाकर एक खुली सभा में सार्वजनिक कोष का महत्व समझाता है, कोष समिति का सदस्य बनने पर इस पद की जिम्मेदारियों की जानकारी देता है। इसके बाद लोग आपस में सलाह करके गांव के अच्छे लोगों से सदस्य बनने का अनुरोध करते हैं। सदस्य बनने के लिये कोई भगदड़ नहीं मचती।

अगर कहीं क्षेत्र के उपायुक्त ने गांव के सम्पन्न लोगों की समिति बनवा भी दी तो वह समिति विफल हो गयी। एक गांव में तो ऐसी निकम्मी समिति के नेताओं को जान बचानी कठिन हो गयी क्योंकि गांव के युवकों ने उसकी निष्क्रियता से खिन्न होकर उन्हें गांव से खदेड़ दिया तथा उन्हें पास के थाने में शरण लेनी पड़ी।

आइये देखें कि सार्वजनिक ग्राम कोष में प्रशासन की क्या भूमिका है? यह सुनिश्चित कैसे हो कि कोष समिति के कामकाज में अफसरशाही का हस्तक्षेप नहीं होगा।

सार्वजनिक कोष समिति के संविधान में प्रशासन का जो एकमात्र अधिकारी इस समिति से सम्बद्ध किया गया है वह है जिले का उपायुक्त। इस बारे में सुझाव गांवों के प्रमुख लोगों की ओर से आया था। आरंभ में सरकार इस बारे में सहमत नहीं थी लेकिन लोगों के जोर देने पर सरकार इसके लिये तैयार हो गयी। गांव के लोगों का कहना था कि सार्वजनिक कोष हमारे लिये कोई नयी बात नहीं है। पैसा बहुत बड़ा प्रलोभन है। यह आग के समान है। इससे अगर खाना पकता है तो दहन भी होता है। उनका कहना था कि कुछ गांवों ने अपना सार्वजनिक कोष बनाने का प्रयोग किया था लेकिन वे सफल नहीं हो पाये। इसलिये कोई ऐसा बाहर का व्यक्ति होना चाहिये जो समिति व कोष पर नजर रखे तथा उन्हें अनुशासित रखे। इसके लिये उपायुक्त से अधिक उपयुक्त व्यक्ति कोई नहीं हो सकेगा। उनका सुझाव था कि उपायुक्त इस कोष समिति के अध्यक्ष बनें।

इस समिति के अध्यक्ष के रूप में उपायुक्त का काम यह है कि वह समिति द्वारा अधिकृत खर्च या बैंक से निकाले जाने वाले धन पर नज़र रखे। वह किसी काम के लिये इन्कार भी कर सकता है लेकिन इसके लिये उसे ग्राम सभा में कारण स्पष्ट करने होंगे।

उपायुक्त के अधीन अधिकारियों को भी लोगों ने इन कोष समितियों में सम्मिलित करने के प्रयास किये परंतु सरकार ने उनसे स्पष्ट कर दिया कि इन समितियों से स्थानीय अधिकारी बिल्कुल अलग रखे जायेंगे वरना इनकी स्वायत्तता कायम नहीं रह पायेगी।

उपायुक्त को एक अन्य जिम्मेदारी भी सौंपी गयी है। उपायुक्त इस बात का भी ध्यान रखेंगे कि लोग सार्वजनिक कोष के प्रति उदासीन न होने पायें। समिति निष्क्रिय न होने पाये और यह ठीक ढंग से काम करती रहे तथा इसके कामकाज में लोग रुचि लेते रहें। क्या उपायुक्त इस उत्तरदायित्व का ठीक से निर्वाह कर सकेंगे ? अगर वे चाहें तो बहुत कुछ कर सकते हैं ।

इसी तरह गांववासियों पर भी बड़ा उत्तरदायित्व है। अगर वे उत्साह दिखायें तो समितियां आदर्श स्थापित कर सकती हैं। वैसे हमारे पास दोनों तरह के उदाहरण मौजूद हैं। एक गांव में उदासीनता तथा निष्क्रियता की स्थिति यह थी कि गांव के लोग यह भी भूल गये कि वे इस समिति के सदस्य हैं। दूसरी ओर एक गांव ऐसा भी था जहां हर व्यक्ति को जानकारी थी कि कोष समिति की मासिक बैठकें किस दिन होती हैं।

प्रत्येक गांव में ग्राम सभा है, जिसमें गांव के बड़े-बूढ़े शामिल रहते हैं। गांव के बारे में हर फैसला ग्राम सभा करती है। यही गांव की अदालत भी है जहां गांव के झगड़े निपटाये जाते हैं। इस ग्राम सभा में गांव के प्रत्येक वर्ग के प्रतिनिधि शामिल रहते हैं। इनका चुनाव खुली आम सभाओं में किया जाता है।

गांव के किसी व्यक्ति को अगर सार्वजनिक कोष समिति या इसके किसी सदस्य के बारे में कोई शिकायत है तो वह ग्राम सभा के पास जा सकता है। अगर कोष समिति की कोई समस्या है तो वह भी ग्राम सभा के पास जा सकती है। इस प्रकार यह ग्राम सभा गांव तथा ग्रामवासियों दोनों के समस्त हितों की भरोसेमंद संरक्षक है।

ग्रामवासियों को संगठित करने के अन्य प्रयास भी समय-समय पर होते रहे हैं। उदाहरण के तौर पर सहकारिता आंदोलन। नगालैंड में आम तौर पर यह कहा जाता है कि इस राज्य में यह आंदोलन विफल रहा है। इस विफलता के कारण ढूंढने के प्रयास किये गये। यह कहा जा सकता है कि सहकारिता आंदोलन में ग्रामीण निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिये शामिल होते हैं। परन्तु सार्वजनिक कोष कार्यक्रम में यह प्रेरणा है कि प्रत्येक व्यक्ति दूसरे पर निर्भर है और इस प्रकार सब एक दूसरे के काम आ सकते हैं। सहकारिता में हिस्सा पूंजी होती है जबकि इस सार्वजनिक कोष में हिस्सा नहीं, अंशदान होता है। अगर कोई व्यक्ति गांव छोड़ रहा है तो वह इस कोष से अपना अंशदान वापिस नहीं मांग सकता लेकिन सहकारी समिति से निकलने वाला सदस्य अपनी हिस्सा पूंजी वापस मांग सकता है। वास्तव में सहकारिता आंदोलन की विफलता के कारण ही गांवों के बड़े-बूढ़ों ने सार्वजनिक कोष कार्यक्रम की अवधारणा सामने रखी। अब संभवतः होना यह चाहिये कि गांव स्तर पर यह कोष समिति बने तथा फिर इन गांवों की सहकारी समितियां बनायी जायें। लेकिन हमें यह ध्यान रखना होगा कि इस सम्बन्ध में कायदे-कानून लोग स्वयं ही अपने हिसाब से तय करें। इन पर कोई बने-बनाये कानून या नियम थोपने की कोशिश न की जाये।

सार्वजनिक कोष कार्यक्रम तथा ग्राम कोष के पीछे सरकार के दो उद्देश्य हैं । एक तो यह है कि ग्रामवासियों को अपने सार्वजनिक कोष बनाने के लिये प्रेरित किया जाये। दूसरा उद्देश्य यह है कि उन्हें सरकार के विकास कोष से प्रत्येक वर्ष सहायता लेने के लिये आकर्षित किया जाये ताकि गांव के लोग अपने गांव के विकास कार्यक्रम बनाकर उनके लिये धन लेने में उत्साह दिखायें। इससे गांवों तथा सरकार दोनों को लाभ होगा। गांव निवासी अपना विकास स्वयं करने के लिये प्रेरित व उत्साहित होंगे तथा सरकार को भी गांवों की मांगों, कार्यक्रम, इनके कार्यान्वयन तथा इनके लाभों से यह पता चल सकेगा कि गांवों की वास्तविक आवश्यकतायें क्या हैं तथा किस प्रकार की हैं।

इसके अतिरिक्त एक अन्य बात भी विचार योग्य है । वह यह है कि काफी समय से ग्रामीण क्षेत्र से प्रतिभा का शहरी क्षेत्रों को पलायन हो रहा है। इस प्रकार, शहरी क्षेत्र प्रतिभा का, आधुनिकता का केन्द्र बनते जा रहे हैं। सार्वजनिक कोष

कार्यक्रम से ज्ञान का प्रवाह ग्रामीण क्षेत्रों की ओर मोड़ने का मार्ग प्रशस्त होता है। इस काम में कोष समितियां ग्रामीण व शहरी केंद्रों के बीच एक सेतु का काम करती हैं। समय पाकर ये सार्वजनिक कोष समितियां नगरीय केंद्रों की तुलना में पर्याप्त रूप से दक्ष हो जायेंगी। ऐसा होने में समय तो लगेगा परन्तु होगा अवश्य। उस स्थिति में अगर नगर का व्यक्ति अपनी सम्पन्नता ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के साथ न बांटना चाहे तो कम से कम उसे ज्ञान का आदान-प्रदान तो अवश्य ही करना पड़ेगा। इससे वह बच नहीं सकेगा।

यही सरकार का उद्देश्य भी है। हम चाहेंगे कि वर्ष में कम से कम दो विचार-गोष्ठियां हों जिनसे विभिन्न सरकारी विभागों के विशेषज्ञ गांव के अनुभवी प्रशासकों के साथ बैठकर जानकारी का आदान-प्रदान करें। इससे गांव के प्रशासक स्वयं भी आपस में विचारों का आदान-प्रदान कर सकेंगे। एक जिले में नियमित रूप से ऐसी बैठकों के आयोजन से बहुत लाभप्रद परिणाम सामने आये। इन बैठकों से जिला प्रशासन अब अधिक सजग व संवेदनशील हो सकेगा।

लेकिन यह मानना होगा कि एक जिम्मेदार गांव प्रशासक जिसकी हमने चर्चा की थी, भी एक महत्वपूर्ण व्यक्ति है तथा जब तक कुछ और प्रेरक उपाय न किये जायें वह अपने नये ज्ञान को अपने गांव के लोगों के साथ बांटने को तैयार नहीं होगा। इसके लिये नियम यह होगा कि समिति की प्रत्येक माह एक निश्चित तिथि को बैठक नियमित रूप से बुलायी जाये।

इस बैठक में गांव का प्रत्येक व्यक्ति शामिल हो सकता है तथा कोष समिति से कोई भी प्रश्न पूछ सकता है। अपनी किसी भी शंका का समाधान कर सकता है। लेकिन यहां प्रश्न यह उठता है कि लोगों को इन बैठकों में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित कैसे किया जाये, कैसे उसे कोई भी बात पूछने के लिये तैयार किया जाये। (क्रमशः)

अनुवाद : ओमप्रकाश दत्त

(पृष्ठ 22 का शेष)

एक और विशेष बात, जो समाज की एकता की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है वह है कोडोली में बनाये गये मकानों में सभी मिली-जुली जातियों के लोगों का एक साथ रहना जबकि गांवों में मकान आदि जातिगत आधार पर बने मिलते हैं। इस प्रकार के परिवर्तन से परस्पर उठने-बैठने और खाने-पीने तथा मित्रतापूर्ण वातावरण के फलस्वरूप सामाजिक सामंजस्य पैदा होता है।

दिनोंदिन आवास की समस्या बढ़ती जा रही है। गृहहीन लोगों को मकान दिलाने के लिए ऐसे कार्यक्रम जारी रखना आवश्यक है। बीस सूत्री कार्यक्रम के अनुसार बनाये गये मकानों का स्तर अच्छा होने का अभिप्राय यह है कि राज्य सरकारों को भी वैसे ही निर्माण स्तर अपनाने चाहिए जिससे आवास कार्यक्रम बेहतर ढंग से कार्यान्वित हो सकें। एक अन्य प्रमुख आवश्यकता जिसे पूरा करने के लिए तत्काल कार्रवाई करने की जरूरत है वह है गांवों में रोजगार के अवसर जुटाने की। इसके लिए राज्य और केन्द्र स्तर पर ऐसे उद्योग लगाने की योजनाएं बनानी चाहिए जो कृषि पर आधारित हों।

अनुवाद: पी.सी. पाठक

वापसी

रीना तिवारी

पक्की सड़क छोड़ने के बाद खेतों से रास्ता था। गांव दूर से ही नजर आ रहा था। उसके मन में एक नई खुशी थी। वह बार-बार यहीं सोच रहा था कि अब उसका गांव कैसा हो गया होगा? कई वर्षों बाद वह फिर लौटकर यहां आया है। उसने हिसाब लगाकर देखा, पूरे नौ साल चार महीने। जब वह गांव छोड़कर भागा था तब उसकी मूंछ पूरी तरह संवरी भी नहीं थी। नौ साल चार महीने तक वह अपने गांव से अलग रहा था।

अब क्या यह गांव उसे पहचान पायेगा? घर वाले तो खैर भूलेंगे नहीं। उसे विश्वास था, उसके घरवाले पहले पहल उसके लिए बहुत व्याकुल हुए होंगे। घबराए होंगे, रोये होंगे। यह तो होता ही है। फिर धीरे-धीरे उसके बारे में उन लोगों ने बात करनी भी बंद कर दी होगी। आखिर एक आदमी को कितने दिनों तक कोई याद रख सकता है? वह घर से नाराज हो कर गया था, तब से अब तक जो समय बीता है, उस समय लोगों के मन में यह विश्वास जमा ही दिया होगा कि वह कहीं मर-खप गया होगा। इतने वर्षों तक कौन किसकी चिन्ता करता है।

पगडंडी काफी लम्बी थी। चलने की आदत बहुत दिनों से छूट चुकी थी। एक थकान उस पर छाने लगी थी परन्तु वह अपने को थका हुआ महसूस नहीं कर रहा था। उसकी चाल में तेजी आती जा रही थी।

भैया उसे आंखे फाड़-फाड़ कर देखता रह गया।

"तु...तु...म...गोपाल ही हो न?" उसे जैसे विश्वास ही न हो पा रहा हो कि उसका छोटा भाई लौटकर फिर आ सकता है।

उसने भैया के चेहरे को देखा। उसके चेहरे पर घिरे संदेह ने एक चोट दी उसे। गला भर आया उसका।

"तुमने मुझे पहचाना नहीं भैया? यह देखो, तुमने बचपन में मेरे हाथ पर मेरा नाम गोदवाया था – गोपाल त्रिपाठी। है न?"

भैया को चुप देखकर हताश हो उठा। भाभी एक तरफ चेहरे पर थोड़ा-सा घूंघट किए खड़ी थी। खैर, भाभी तो उसे पहचानेगी ही नहीं। वह तो तब थी भी नहीं, जब वह भागा था।

भैया ने भाभी की ओर एक बार देखा, फिर उसके बक्से को देखता हुआ बोला "ठीक है, सामान भीतर रख लो।"

भैया ने जिस ढंग से यह बात कही थी, उसकी इच्छा तो हुई इस घर में कदम रखने से अच्छा है वापस ही लौट जाये। लेकिन उसने सोचा, भैया शायद सचमुच नहीं पहचान पाए हैं। पहचान लेंगे तो जरूर...उसके बक्सा उठाकर भीतर रख दिया। आंगन में एक खाट पड़ी थी। भाभी उस पर जल्दी से बढ़कर एक दरी डालने लगी थी, किन्तु उसने रोक दिया – रहनें दो, रहने दो भाभी। पर वह नहीं मानी और दरी को जिस तिस तरह से खाट पर डालकर अलग हट गयी।

वह थकान महसूस करने लगा था। खाट पर बैठ गया। जूते उतारकर लेट गया। भैया की तरफ से उसका ध्यान हट गया था। भैया की बात वैसे वह सोच रहा था। जब वह लेट गया तो भैया कुछ कहते – कहते रुक गया। कुछ देर तक उसे देखते रहने के बाद बाहर द्वार पर निकल आया। पत्नी उसके पीछे-पीछे थी, "अजी, यह क्या सचमुच तुम्हारा भाई है?"

भैया ने सिर हिलाकर हां कर दी। वह गोपाल को देखकर ही काफी गंभीर हो गया था। बोला, "तुम उसके खाने-पीने का बंदोबस्त करो। कुछ देर में आऊंगा।"

भैया बिलकुल पास में लेटा था। वह तख्त पर था। रात का सन्नाटा चारों तरफ फैला हुआ था। वह बार-बार आंखे बंद करता पर पलकें फिर खुल जातीं। वह खुली आंखों से

तारों भरे आकाश को देख रहा था – क्या भैया को अब तक विश्वास नहीं हो पाया है? क्या वह अपना खोया भाई पाकर खुश नहीं है? भैया भी ठीक उसी की तरह जगे हैं, यह वह समझ रहा था। वे बार-बार करवटें बदल रहे हैं। उसका मतलब ही है कि नींद उन्हें भी नहीं आ रही है।

"सो गया गोपाल?"

"ना। मैं तो सोच रहा था कि तुम सो गए भैया।"

"इतने सालों तक क्या करता रहा रे? कहां रहा?"

भैया यह पूछेंगे, उसे विश्वास था। किन्तु वह अपने बीते दिनों की बात उन्हें बताने को तैयार न था।

"घर से भागे लड़कों की क्या दशा होती है, यह तो तुम से छिपा नहीं है भैया! सबसे पहले मैं एक होटल में बेयरा बना, फिर एक गैरेज में। कुछ दिनों तक..." वह रुक गया। वह सोचने लगा कि क्या यह बताना ठीक रहेगा कि अब वह किसी का दत्तक पुत्र बन गया है? उसी गैरेज के मालिक का। वह चुप रहा। भैया शायद आगे कुछ पूछते पर पता नहीं क्यों चुप ही रह गए। उसने अपनी बात बीच में ही छोड़ दी। बोला, "तुम अच्छे हो न, भैया?"

"हूं।" एक हुंकारी भरी भैया ने।

उसने साहस करके फिर कहा "मैं अब कुछ दिन गांव में ही रहना चाहता हूं, भैया।"

"आं? क्या? गांव में?" भैया एकदम चौंक कर अपने बिस्तर पर उठ बैठे, "गांव में रहेगा? गांव...तेरी इच्छा!" और वह अपने बिस्तर पर फिर पसर गए।

भैया का इस तरह चौंकना, उठना-बैठना, सोना सब कुछ उसे अजीब-सा लगा। उसे विश्वास हो गया कि भैया अभी उससे इस बारे में कुछ भी बात करना नही चाहते। पर इससे अच्छा मौका शायद फिर न मिले, यही सोचकर वह फिर बोला, "तो मैं सुमति को बुला लूं न?"

"सुमति? कौन सुमति?" भैया ने इस बार उठकर धीमी पड़ी लालटेन को तेज कर दी और उसके चेहरे को देखते हुए बोले, "किस सुमति को बुलाओगे।"

"पत्नी! मेरी पत्नी है भैया।"

"ओह! तो तुमने शादी भी कर ली है?"

"हां भैया! कुछ परिस्थिति ही ऐसी थी। मैं बाद में जिस बंगाली महोदय के घर में रहने लगा था, उन्हीं की लड़की।"

"ओह! अब तुम मुझे सोने दो। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि इतना कुछ, इतने लम्बे समय तक करते रहने के बाद अचानक गांव...खैर, अब सो जाओ।" और लालटेन फिर धीमी हो गई। पर उसके बाद भी वह देर तक जगा रहा। भैया अब और भी करवटें बदल रहे थे। किन्तु उसने फिर कुछ कहा नहीं। चुपचाप अंधेरे में आकाश को टटोलता रहा, नजरों से।

दिन भर क्या करेगा, तय नहीं कर पाया।

दोपहर ढल रही थी, जब वह घर से बाहर निकला। भाभी उस वक्त भीतर अपने कमरे में थीं। उनके बच्चे इधर-उधर दौड़-घूप कर रहे थे। शोर मचा रहे थे।

वह गांव को ठीक-ठाक पहचान नहीं पा रहा था। सिर्फ अनुमान लगा पा रहा था कि यहां अमुक का घर था और वहां अमुक का। इनके घर में उसका अधिक आना जाना था और उनके घर में जाने से डांट पड़ती थी। तब मां भी थी, पिता भी। उधर से अचानक कभी पिता आ जाते तो कान पकड़कर पीट देते। अब वे नहीं हैं। उसके आने की खबर गांव भर में फैल तो गई थी किन्तु उसका चेहरा देखकर शायद कम लोग ही उसे पहचान पायेंगे। जो भी मिला, पहले यही पूछता हुआ, "तुम्हीं गोपाल हो न? भाई कितने बड़े हो गए हो। कहां रहते हो? ओ कलकत्ता। तब तो भाई जरूर कोई काम धंधा अच्छा ही करते होगे। क्या काम करते हो?"

वह सबको संतोषजनक उत्तर देने की कोशिश करता रहा। न जाने कौन-कौन लोग थे जिनके प्रश्नों का उत्तर देता वह आगे बढ़ रहा था। बहुत कम लोगों को पहचान पाया वह।

यह वही चबूतरा है। और यही वह चौपाल, जहां जाड़े के दिनों में रात गए तक बैठकर वह कौड़ा (आग) तापा करता था। तब उसको लेकर कितनी तरह की बातें ये गांव वाले उसके भैया से किया करते थे। इस छोटे से गांव की हर छोटी-बड़ी बात की चर्चा यहां हुआ करती थी। वह ध्यान से सुना करता था सब। कितनी अजीब-अजीब बातें। अभी भी ये लोग बैठे किसी न किसी बात की चर्चा ही कर रहे होंगे। अगर परीक्षा में फेल होने के बाद भैया की मार के डर से वह

भाग न गया होता तो आज शायद इन्हीं लोगों के बीच वह भी होता।

वह अपने चेहरे पर हंसी फैलाते हुए उनके पास आ खड़ा हुआ, "नमस्ते दयाल चाचा...प्रणाम हरी काका।" उसने एक-एक कर सबको नमस्ते की और उनके चेहरों को देखने लगा। वे लोग सकपकाए से एक दूसरे का मुंह देख रहे थे। फिर एक बूढ़ा साहस कर जैसे बोला, "कौन? गोपाल बेटे? कैसे हो?" और उसने देखा कि उससे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही दो-तीन आदमी उठ खड़े हुए, "अच्छा बलदेव, अब जरा गोरु पानी का टेम..."

वह समझ गया कि उसका आना इन लोगों को अच्छा नहीं लगा है। उसने जल्दी से फिर सबसे विदा ली। पर मुड़ते ही उसने सुना, हरी काका किसी से कह रहे थे – "शहरी हो गया है।"

"क्यों, क्या हो गया?" किसी ने पूछा।

"अरे इतने बड़े पंडित का लड़का, जिसका बाप दस गांवों में पूजा जाता था, शहरी और वो भी दूसरी जात की लड़की से शादी... तभी मां-बाप यह सब देखने को जिंदा न रहे।"

उसने मुड़कर फिर उन लोगों की ओर एक बार देखा भी नहीं। वह समझ रहा था, आहिस्ते से कही गई बात भी उसे सुनाने के लिए ही कही गई है। एक विचित्र दहशत उस पर छा गई। कैसे हैं ये लोग कि सुनी-सुनाई बातों पर इतनी चर्चा? कम से कम मुझसे पूछते तो कि यह शादी मैंने कब और क्यों की?

घर वापस आकर उसने देखा, भाभी बैठी बरतन मांज रही थी। सुबह के गये भैया अब तक नहीं लौटे? उसने भाभी से पूछा तो भाभी दोनों होंठों को आगे सिकोड़ कर फैलाती हुई बोली, "फसल का टेम है लाला, वहां खेत पर बैठ कोई मक्खी तो मारता नहीं। रेहट चला रहे होंगे आलू वाले खेत में।"

आलू वाला खेत कौन-सा होगा, यह अन्दाजते हुए वह वहां पहुंच गया। ठीक ही कहा था भाभी ने। भैया अभी तक रेहट चला रहे थे। बैल धीरे-धीरे चल रहे थे। बैलों के साथ-साथ भैया भी थक गए थे। फिर भी बैलों के साथ घिसट रहे थे।

अचानक वह भैया के पास आ खड़ा हुआ और उसके हाथ से पैना लेता हुआ बोला, "तुम थक गए हो, भैया। जाओ कुछ देर आराम कर लो। तब तक मैं बैलों को हांकता हूं।" और उसने एक तरह से बलात ही भैया को दूर हटा दिया तथा खुद बैलों को हांकने लगा। भैया कुछ चकित उसे देखते रहे, "अरे गोपाल, तू नहीं चला पायेगा। यह तेरा काम नहीं है।"

वह न माना। भैया कुछ अव्यवस्थित और घबड़ाया-सा कुछ दूर हटकर खड़ा हो गया। कुछ देर बाद बैलों ने जब उसे ढीला पड़ते देखा, वे अकड़ने लगे। एक बैल तो इस तरह अकड़ गया कि उसकी हर चेष्टा के बावजूद वह चलने को तैयार नहीं हुआ। वह गुस्से में आकर बैल की पीठ पर तड़ातड़ पैना बरसाने लगा। उसके माथे पर पसीना चुहचुहा आया। भैया दूर नहीं थे। दौड़ते हुए आये और उसके हाथ से पैना छीनते हुए बोले "अब बस भी करो। मैंने पहले ही तुमसे कहा था, यह तुम्हारे बस का रोग नहीं, पर..." और भैया ने उस बैल को हल्के से पुचकारते हुए पीछे से पैने से खोदा और वह चलने लगा। उसने देखा और उदास चेहरा लिए वहां से हट गया। सचमुच यह सब वह नहीं कर सकता। कर भी कैसे सकता है, कभी किया ही कहां? पर अब तो सब सीखना ही होगा, अगर यहां रहना है। यह सब सोचते हुए उसे सुमति की याद आ गयी। कितनी देर तक समझाती रही थी सुमति भी उसे, "तुम शहर में रहे हो, गांव में तुम कुछ भी नहीं कर पाओगे। वहां तुम्हारे पास जमीन-जायदाद चाहे जो कुछ भी हो, किन्तु तुमसे वहां रहा नहीं जायेगा। शहर की आदत गांव में..."

लेकिन वह नहीं माना था।

तब उसने यही सोचा था कि सुमति डर के कारण ही यह सब कह रही है। तब उसने किस तरह उत्साहित होकर सुमति को समझाया था। "अब गांव में रहने में ही लाभ है। वहीं फार्मिंग करेंगे। और अब तो गांवों में भी लोग एकदम बदल गए हैं। वे छोटी-मोटी बातों पर ध्यान ही नहीं देंगे। गैर-जाति में शादी-ब्याह तो अब एक मामूली बात हो गई है।"

और सुमति को छोड़ आया था वह शहर में। रात को देर तक सुमति की बातें आस-पास मंडराती रहीं।

वह बार-बार करवटें बदल रहा था। तरह-तरह के विचार उसके मन आ रहे थे। गांव वालों ने उसके साथ जैसा

व्यवहार किया था क्या उस हालत में यहां पत्नी के साथ रह पाना सम्भव होगा?

भैया भी शायद जगे ही थे। उसे बार-बार करवटें बदलते देखकर उन्होंने पूछा, "क्यों गोपू, नींद नहीं आ रही?"

"नहीं भैया।"

"क्यों, क्या बात है?"

"मुझे लगता है भैया कि यहां रह पाना अब मेरे लिए मुश्किल होगा। मुझे वापस शहर लौट जाना चाहिए।"

भैया चौंककर उठ बैठे, "क्या कह रहा है, गोपू? इतने वर्षों बाद तू गांव आया, मुझे मिला और मैं फिर तुझे खो जाने दूं? नहीं गोपू, अब यह नहीं होगा। मैं तुझे दुबारा नहीं खो सकता। तू यहीं रहेगा और तेरी पत्नी भी यहीं रहेगी। तुम्हें शहर जाने की जरूरत नहीं, मैं खुद उसे जाकर ले आऊंगा। तू गांव वालों से मत डर, उन्हें मैं समझा लूंगा।"

गोपू अवाक भैया का मुंह देखता रह गया। फिर उसके होंठों पर एक मुस्कान फैल गयी। बोला, "ठीक है भैया, जैसा आप कहें।"

और वह आराम से सो गया।

10101-बी-4, वेस्ट गोरख पार्क
शाहदरा, दिल्ली-110 032.

इन्हीं धरती से

संजय कुमार 'पंजियार'

अब तो लगे हैं, सजाने,
हम तुझे ओ धरती ।
देंगे फल-फूल से पाट,
हम तुझे ओ-धरती।
तेरे चारों ओर होगी, हरियाली
ही हरियाली ओ-धरती ।
मेह भी झुक-झुक करेंगे,
तुझे सलाम ओ-धरती ।
होंगी चारों तरफ हरी-भरी,
जमीं तेरी ओ-धरती ।
तेरे स्वागत में हर भाद्रो,
मूसलाधार बारिस लाएगी ।
सूखा का कहीं नाम न होगा,
तेरी जमीं पे कहीं रेगिस्तान न होगा ।
इसलिए तो लगे हैं, सजाने,
हम सब तुझे ओ-धरती ।

सुभाष नगर, कस्बा पूर्णियां
बिहार-854330

आई.आर.डी.पी. – गरीबों का सहारा

मुकेश खण्डेलवाल

आज हमारे देश के सामने गरीबी और बरोजगारी की प्रमुख समस्यायें हैं। इन समस्याओं से निपटने के लिए सरकार ने देश के हर गांव में अनेक योजनाएं चलाई हैं। प्रधानमंत्री जी ने भी ग्रामीण विकास पर विशेष बल दिया है। भारत सरकार का ग्रामीण विकास विभाग मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों के साथ-साथ समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.) चला रहा है।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम गांवों से गरीबी दूर करने का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। इसका उद्देश्य उन परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना है, जो अब तक गरीबी की रेखा से नीचे हैं। जिस ग्रामीण परिवार की वार्षिक आमदनी 6,400 रुपये अथवा इससे कम हो, उसे गरीबी की रेखा से नीचे वाला परिवार माना जाता है। चूंकि कार्यक्रम का उद्देश्य सबसे गरीब तबके के लोगों को मदद देना है, इसलिये पहले उन परिवारों को मदद के लिए चुना जाता है, जिनकी सालाना आमदनी 3,500 रुपये से कम हो। एक ब्लॉक में जब ऐसे परिवार लाभ प्राप्त कर लेते हैं, तभी अन्य परिवारों को चुना जाता है। इस कार्यक्रम के माध्यम से छोटे किसान, सीमान्त किसान, खेतिहर मजदूर अथवा ग्रामीण दस्तकार या अन्य व्यक्ति जिनके परिवार की वार्षिक आमदनी 4,800 रुपये से कम हो, सरकार से सहायता लेकर अपना व्यवसाय शुरू कर सकते हैं और अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। इसके तहत गरीब परिवारों को सहायता पैकेज मिलता है, जिसमें सबसिडी और संस्थागत वित्त शामिल होता है।

इस कार्यक्रम के तहत पहले मुख्यतः कृषि और संबंधित गतिविधियों पर जोर दिया गया था। अब धीरे-धीरे लघु और कुटीर उद्योग तथा छोटे-छोटे व्यवसायों पर भी ध्यान दिया जा रहा है। राज्य सरकारें रोजगार देने के तहत ग्रामीण युवकों को आधुनिक मशीनों के निर्माण व मरम्मत सम्बन्धी प्रशिक्षण देती हैं। वे रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, घरेलू जरूरतों संबंधी बिजली का सामान, स्कूल की वर्दियां आदि तैयार कर सकते हैं। इस कार्यक्रम की नई नीति के अन्तर्गत गतिविधियों में विविधता लाने पर जोर दिया गया है जैसे सब्जी उगाना, मछली पकड़ना, चाय के बगीचे लगाना और सार्वजनिक क्षेत्रों के जरूरी सामान की आपूर्ति करना।

हर गरीब परिवार को रोजगार की ऐसी योजना दी जाती है, जो उसकी पसन्द की हो और जिसे वह कर सकता हो। इस बात पर खास ध्यान दिया जाता है कि ऐसे व्यवसाय चुने जाएं जिनके लिए कच्चा माल आसानी से मिल सके और बने हुए सामान की आसानी से खपत हो सके।

आई.आर.डी.पी. के अन्तर्गत जहां पहले 5,000 रुपये तक बिना सिक्यूरिटी के कर्ज मिल सकता था, अब 10,000 रुपये तक ऐसा किया जा सकता है। ग्रामीण उद्योग एवं सेवा व्यवसाय क्षेत्र के मामले में यह सीमा 25,000 रुपये तक कर दी गयी है। निर्धन लोगों को कर्ज प्राप्त करने में आने वाली दिक्कतों को दूर करने के उद्देश्य से बैंकों की कार्य-पद्धति में भी सुधार किए गए हैं। लाभ-ग्राहियों को कर्ज पास-बुक और विकास पत्रिका अवश्य उपलब्ध कराई जाती हैं। जहां पहले महीने में दो दिन ही बैंक द्वारा कर्ज दिए जाने की सुविधा थी, वहां अब यह सुविधा सप्ताह के दौरान एक दिन कर दी गई है ताकि लोगों को दिक्कत न आने पाये।

भारत सरकार के ग्रामीण विकास विभाग में समवर्ती मूल्यांकन प्रणाली शुरू की गई है। इस प्रणाली से लाभ ग्राहियों को कर्ज मिलने में लगने वाले समय और दिक्कतों का अध्ययन किया जाता है तथा उन्हें दूर करने के प्रयास किये जाते हैं।

जिन गरीब परिवारों को छठी योजना के दौरान सहायता दिए जाने के बावजूद, वे अपनी ओर से बिना किसी वजह के, गरीबी से छुटकारा नहीं पा सके, उन्हें सातवीं योजना में पूरक सहायता दी गई है। यही नहीं, अब प्रति परिवार पहले से ज्यादा निवेश की व्यवस्था भी कर दी गई है, ताकि गरीब परिवार बिना किसी दिक्कत के अपनी आमदनी बढ़ा सकें। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि यह सुनिश्चित करने का

प्रयास किया जाता है कि सही लाभार्थी का ही चयन किया जाए, अन्यथा कार्यक्रम का उद्देश्य ही विफल हो जायेगा। इसके लिए लाभार्थी के चयन का अनुमोदन ग्राम-सभा में होना चाहिए। इस योजना के अंतर्गत यह अपेक्षा की गई है कि लाभार्थियों का संगठन बनाया जाए, जहां लाभार्थियों को कार्यक्रम के कार्यान्वयन के बारे में अपने अनुभव/शिकायतें व्यक्त करने के लिए एक मंच मिल सके।

छठीं योजना के दौरान इस कार्यक्रम से 165 लाख परिवारों को लाभ मिला है। इन पर लगभग 4,700 करोड़ रुपये व्यय हुआ है जिसमें से 3,100 करोड़ रुपये बैंकों से ऋण के रूप में दिया गया और 1,600 करोड़ रुपये सरकार की तरफ से था। छठी योजना के अंत तक गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले परिवारों का प्रतिशत 40 था। सातवीं योजना में 2 करोड़ गरीब परिवारों को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता पहुंचाई जाएगी। इन पर लगभग 6,500 करोड़ रुपये व्यय होंगे जिसमें से 4.000 करोड़ रुपये बैंकों से ऋण के रूप में होगा।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत यह व्यवस्था की गई है कि सहायता प्राप्त करने वाले परिवारों में कम से कम 30 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के होने चाहिएं और 30 प्रतिशत महिला लाभार्थी होनी चाहिएं।

यहां यह विशेष उल्लेख है कि इस योजना का उद्देश्य रुपये बांटना नहीं है, बल्कि यह योजना गरीब परिवारों को उनके प्रयत्नों द्वारा ही गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने का प्रयास करती है ताकि हर गरीब परिवार खुशहाल बन सके। यह निश्चित है कि यदि इस योजना का कार्यान्वयन पूरी निष्ठा और लगन के साथ किया जाता है तो देश का हर गरीब परिवार एक दिन गरीबी की रेखा से ऊपर उठ सकेगा और एक खुशहाल जीवन का आनन्द ले सकेगा।

डी-113, पोस्ट ऑफिस लेन,
शकर पुर, दिल्ली-110 092.

कमजोर वर्गों के लिए आश्रय स्थल

ग्रामीण विकास मंत्री श्रीमती मोहसिना किदवई ने लोकसभा में श्री शरद दिघे के एक प्रश्न के लिखित उत्तर में बताया कि 20 सूत्री कार्यक्रम की विभिन्न आवास योजनाओं, जोकि समाज के सबसे गरीब वर्गों के लिए हैं, के अंतर्गत बेघरों के लिए घर के अंतर्राष्ट्रीय वर्ष 1987 के दौरान 8.96 लाख ग्रामीण भूमिहीन परिवारों को आवास स्थल तथा 4.16 लाख परिवारों को आवास स्थलों के निर्माण के लिए सहायता दी गई। इन्दिरा आवास योजना के तहत 1.75 लाख रिहायशी एकक भी उपलब्ध कराये गये।

आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों के लिए 1.65 लाख रिहायशी एकक तथा 27 हजार रिहायशी एकक निम्न आय वर्ग के लोगों को उपलब्ध कराये गये। इसके अतिरिक्त हुडको ने 1987 के दौरान 293.57 करोड़ रुपये की परियोजना लागत तथा 184.62 करोड़ रुपये की ऋण सहायता से 352 परियोजनाएं स्वीकृत की हैं जिससे आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों और निम्न आय वर्गों से संबंधित लगभग 22.5 लाख व्यक्तियों को लाभ पहुंचेगा।

उन्होंने कहा कि आवास राज्य का विषय है तथा सभी सामाजिक आवास योजनाओं का कार्यान्वयन राज्य सरकारों/केन्द्र शासित क्षेत्रों में प्रशासनों द्वारा अपनी स्थानीय आवश्यकताओं एवं योजना प्राथमिकताओं के अनुसार किया जाता है। राज्य सरकारों/केन्द्र शासित क्षेत्र प्रशासनों को केन्द्रीय वित्त सहायता विकास के किसी विशेष शीर्ष से सम्बद्ध किए बिना समेकित ऋणों और अनुदानों के रूप में दी जाती है। इसके अलावा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा मुक्त किए बंधुआ मजदूरों के लिए आर.एल.ई.जी.पी. कार्यक्रम के एक भाग के रूप में केन्द्रीय क्षेत्र के अंतर्गत 1985-86 से केन्द्र सरकार ने इन्दिरा आवास योजना नामक एक योजना प्रारम्भ की है। □

पर्यावरण और सभ्यता

कृष्णस्वरूप आनन्दी

औद्योगीकरण द्वारा तेजी से प्रकृति का निर्मम दोहन हो रहा है, जिससे मूल्यवान प्राकृतिक संसाधनों को लुप्तप्राय हो जाने का स्थायी जागतिक संकट दिखाई दे रहा है। भारी औद्योगीकरण विवेक का विपर्यय है, पर्यावरण का शत्रु है। पूँजीवादी उत्पादन-तंत्र और प्रौद्योगिकी के संयोग से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक ऐसी आदमखोर अर्थव्यवस्था का अभ्युदय हुआ है, जो एक तरफ प्रकृति के साथ हिंसा कर रही है और दूसरी तरफ मनुष्य का सत्व खींच ले रही है। प्रकृति मनुष्य की जननी है। उसका हित प्रकृति के साथ समरस होने में है, सहजीवन करने में है। उच्छृंखल विज्ञान और हिंसक प्रौद्योगिकी के द्वारा औद्योगिक मानव ने प्रकृति पर आधिपत्य जमाने की सोची। उनके विध्वंसक दुष्परिणाम आज सामने हैं; पर्यावरण में प्रदूषण का जहर घुलता जा रहा है, पारिस्थितिक असंतुलन बढ़ रहा है, और समूचा परिवेश दमघोटू हो चला है। औद्योगिक मानव ने प्रकृति की सौम्यता, सदाशयता और सुन्दरता के साथ खिलवाड़ किया है। उसने इस बात की तनिक भी परवाह नहीं की कि प्रकृति से, निश्चय ही, उसकी सारी बुनियादी जरूरतों की पूर्ति सम्भव है; लेकिन उसकी भोग्यत्व भावना, चौर्यवृत्ति और तृष्णा की तुष्टि कदापि नहीं। गाँधीजी की दृष्टि में– "यह धरती अपने प्रत्येक निवासी की आवश्यकता पूरी करने के लिए यथेष्ट साधन उपलब्ध करती है, लेकिन हर व्यक्ति के लालच की पूर्ति नहीं कर सकती।"

भयावह विचार

धरती सबकी माता है। यह सोचना कितना भयावह है कि धरती पर सिर्फ मनुष्य ही रहे, और उसी से उत्पन्न मनुष्येतर प्राणियों; वन्यजीवन, वनस्पतियों, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों आदि का नामोनिशान तक न रहे। औद्योगिक मानव ने पर्यावरण को दूषित करने के लिए भूमि के साथ अनाप-शनाप जोर जबर्दस्ती की। टाम टेव और वर्नन गिल कार्टर 'टाप स्वाएल एण्ड सिविलिजेशन' में कहते हैं– "सभ्य मानव ने अनुकूल पर्यावरण को जिस प्रकार बर्बाद किया? उसने ऐसा मुख्य रूप से प्राकृतिक संसाधनों को खर्च करके अथवा उन्हें नष्ट करके किया। पहाड़ों व घाटियों के जंगलों में जितनी इस्तेमाल के योग्य लकड़ी थी, उसने काट डाली या जला दी। जो चरागाह उसके पशुओं को भोजन देते थे, उनका इतना ज्यादा इस्तेमाल किया कि वे पूरी तरह चुक गए। उसने अपनी कृषि भूमि की उत्पादक ऊपरी मिट्टी बह जाने दी और उससे जलधाराओं का मार्ग रुक जाने दिया, जलाशयों, सिंचाई की नहरों और बन्दरगाहों को रेत से भर जाने दिया। अनेक जगहों पर उसने आसानी से खोदी जा सकने वाली धातुओं या दूसरे आवश्यक खनिज पदार्थों के विपुल भण्डार इस्तेमाल कर लिए और उन्हें बर्बाद कर दिया।"

मिट्टी की ऊपरी परत के बारे में ग्रेग महोदय कहते हैं कि असल में भूमि पर रहने वाली सम्पूर्ण जीवसृष्टि- वनस्पति, वृक्ष, कीड़े-मकोड़े, जानवर और मानव प्रणाली सबका आधार ऊपर की लगभग 20 से.मी. जमीन की थर के अस्तित्व और स्वस्थ स्थिति पर है। यह जमीन का वह हिस्सा है, जिसमें जमीन के कीटाणु दूसरे अति सूक्ष्म जीव और केंचुए आदि होते हैं। प्राकृतिक अवस्था में घास, छोटे-छोटे पौधे और पेड़ों की जड़ें जमीन को पकड़े रहती हैं और उसे पानी के प्रवाह में बह जाने और हवा में उड़ जाने से बचाती है। पत्ते और मृत तथा नष्ट हो रही वनस्पतियाँ जमीन को बचाती हैं और स्पंज की तरह विशाल मात्रा में पानी को सोखकर जमा कर रखती हैं। परन्तु यदि जंगल आग लगने या अत्यधिक कटाई से नष्ट हो जाते हैं और यदि भेड़-बकरियाँ घास, छोटे-छोटे पौधे तथा छोटे-छोटे पेड़ चरकर साफ कर देती हैं या जमीन में ठीक ढंग से खेती नहीं की जाती, तो जमीन की ऊपरी परत पानी में बह जाती है या आँधियों से उड़ जाती है या बाढ़ में उस पर रेत जम जाती है या वह बुरी तरह सूख जाती है और इसके फलस्वरूप रेगिस्तान बन जाता है। तात्पर्य यह है कि सारे

पहाड़ों, पहाड़ियों और अत्यन्त ढालू जमीनों का जंगलों से अच्छी तरह ढका रहना भूमि की रक्षा, अन्न की पैदावार, उससे पैदा होने वाली सुरक्षा, निश्चितता तथा समृद्धि के लिए और प्रत्येक राष्ट्र, संस्कृति या सभ्यता के टिके रहने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

अति औद्योगीकरण घोर अन्याय है

द्रुत औद्योगीकरण दुनिया के ज्ञात प्राकृतिक संसाधनों को चट किए जा रहा है। खपत की वर्तमान दरों को देखते हुए तमाम विज्ञानियों, सांख्यिकीविदों एवं अर्थशास्त्रियों ने उनके अल्पायुष्क जीवन-काल का पूर्वानुमान किया है। उनकी खपत की दरों में बेतहाशा वृद्धि होती जा रही है। आज ऊंची संवृद्धि-दर वाली अर्थव्यवस्था को तरजीह दी जाती है, भले ही उससे भूमि, जल, वायु, ध्वनि आदि में लाइलाज प्रदूषण की विश्वव्यापी महामारी फैलती जाए। अति औद्योगीकृत देश अपने आन्तरिक प्राकृतिक संसाधनों के बलबूते पर ही अपने वृहदाकार संयंत्र, कल-कारखाने और औद्योगिक प्रतिष्ठान नहीं चला रहे, बल्कि वे दूसरे अविकसित, अल्पविकसित या विकासशील देशों के प्राकृतिक संसाधनों और कच्ची सामग्रियों की धुँआधार खपत कर रहे हैं। इस प्रकार वे दूसरे देशों का रक्तदोहन कर रहे हैं।

विकसित देशों में रहने वाला दुनियाँ की कुल आबादी का 5-6 प्रतिशत, दुनिया के 40 प्रतिशत बुनियादी प्राकृतिक संसाधनों का भोग करे इससे बढ़कर अन्याय और क्या हो सकता है? इतना ही नहीं, अब यह माँग भी जोर पकड़ रही हैं कि पृथ्वी के गर्भ में छिपे अब तक अज्ञात भण्डारों और स्रोतों का पता लगाया जाए और उनकी जोर-शोर से खुदाई की जाए। इस प्रकार धरती और प्रकृति के दरिद्रीकरण की प्रक्रिया औद्योगीकरण के साथ-साथ चल रही है।

सर्वनाश के साधन

आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी पिछले कुछ दशकों से सर्वनाश के भौतिक साधन जुटाती जा रही हैं। विध्वंसक विस्फोटक-पदार्थों का बड़ी मात्रा में संचय किया जा रहा है, जबकि उन्हें सुरक्षित रख पाने की विधि भी औद्योगिक मानव को भलीभाँति ज्ञात नहीं है। इन्हें नष्ट करने की बात तो दूर, इनका संरक्षण भी अपने आप में एक भारी खतरा है। ये पीढ़ी-दर-पीढ़ी मानव जाति के लिए खतरे बने रहेंगे। जब मनुष्य, प्रकृति और पृथ्वी पर इनके तात्कालिक प्रभाव ही इतने अधिक भयावह हैं, तो इनके दूर-गामी दुष्प्रभावों का तो पूर्वानुमान तक अभी नहीं किया जा सकता है।

आधुनिक विज्ञान की स्तब्ध कर देने वाली उपलब्धि है-न्यूक्लीय विखण्डन जिसके फलस्वरूप पर्यावरण को विषाक्त करने का सर्वाधिक नृशंस साधन आयनिक विकिरण प्राप्त हुआ है। यह मानव जीवन के अस्तित्व के लिए ज्वलंत खतरा है। जिन्दा तन्तुओं पर अल्फा, बीटा, गामा किरणों की बौछार मानव जीवन के लिए अत्यन्त हानिकारक है। विकिरण के अणु जीवित शरीर में गोली की तरह छेदकर घुल जाते हैं और कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त कर देते हैं। इन विकिरणों का प्रभाव सम्पर्क में आने वाले लोगों पर होता ही है, उनकी भावी सन्ततियों पर भी पड़ता है। न्यूक्लीय रिऐक्टरों द्वारा उत्सर्जित रेडियो-ऐक्टिव अवशेष जहां कहीं भी रखे जाएँ, चाहे समुद्र की अतल गहराइयों में डुबोए जाएँ, उनका दुष्प्रभाव अवश्य पड़ेगा, जिससे पर्यावरण विषाक्त होकर ही रहेगा।

त्राण का मार्ग

पर्यावरण प्रदूषण के मूल में आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हैं। ये न केवल मनुष्य का शोषण करते हैं, वरन प्रकृति का भी दोहन करते हैं। आज की प्रविधि का प्रकृति के प्रति आक्रामक रुख है। मनुष्य और प्रकृति के शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए यह परमावश्यक है कि आज की तकनीक मानव-केन्द्रित बने, प्रकृति के साथ उसका अविरोध भाव हो और मनुष्य की सृजनशीलता के अनुरूप हो।

कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि उत्पादन यंत्र-निरपेक्ष हों। मशीनें रहें, लेकिन मनुष्य का स्थान न लें, बल्कि उसकी कार्यक्षमता में अभिवृद्धि करें, और उसके अनावश्यक बोझिल शारीरिक श्रम की बचत करें। अतएव हमें ऐसे छोटे-छोटे यंत्रोपकरण, उपस्कर और औजार-हथियार चाहिए जो मनुष्य के साथी-संगी हो, उसके व्यक्तित्व के विकास और निखार में उत्प्रेरक का काम करें। छोटी-छोटी कर्मशालाओं में मनुष्य श्रम-सघन तकनीक के द्वारा उत्पादन करे और बेकाम न रहे।

आज यह आवश्यक है कि विज्ञान और औद्योगिकी का बड़ी हद तक पुनरभिविन्यास किया जाए ताकि इनमें विवेक

(शेष पृष्ट 36 पर)

एगमार्क : मिलावट और आप

कु. रीटा के. इसरानी

"खाद्य सामग्रियों में विभिन्न रंग की मिलावट से खतरा", "मिलावट रोकने के लिए उपभोक्ता आंदोलन पर जोर", "मिलावट करने वालों को संरक्षण देने का आरोप", "दूध में मिलावट", "30 बर्खास्त" भारतीय समाचार पत्रों में प्रकाशित कुछ समाचारों के शीर्षक हैं इनसे देश में खाद्य पदार्थों में व्याप्त मिलावट का अनुमान लगाया जा सकता है।

एगमार्क क्या ?

एगमार्क शब्द अंग्रेजी के दो शब्दों एग्रीकल्चरल मार्केटिंग (अर्थात कृषि विपणन) का छोटा रूप है तथा यह संवैधानिक सील के रूप में इस्तेमाल होता है। यह सील उन्हीं पदार्थों पर इस्तेमाल की जा सकती है जिनमें किसी प्रकार की "मिलावट" नहीं पाई जाती तथा जिनकी शुद्धता की पूर्णतया परख हो चुकी होती है। "मिलावट" इस शब्द का "एगमार्क" से गहरा संबंध है। मिलावट का अर्थ है किसी भी एक वस्तु का दूसरी वस्तु में अनावश्यक मिश्रण।

"एगमार्क" ऐसा प्रमाण चिन्ह है जो एक निष्पक्ष संस्था द्वारा दिया जाता है। एगमार्क न केवल उपभोक्ता बल्कि उत्पादक के हित की भी रक्षा करता है। एगमार्क चीजें इस्तेमाल करने वाला ग्राहक मिलावट भरी चीजों से और उनके दुष्परिणामों से बच जाता है।

आमतौर पर यह पाया जाता है कि बाजार में मिलने वाले करीब सभी खाद्य पदार्थों में मिलावट की जा रही है। हालांकि इस मिलावट से व्यापारी जरूर अपनी आय बढ़ा पाने में समर्थ हो रहे हैं परंतु इससे सामान्य जनता को काफी नुकसान पहुंच रहा है। इस मिलावट से कभी-कभी मनुष्य को जान से भी हाथ धोना पड़ता है। सिर्फ थोड़ी-सी आय में वृद्धि के वास्ते आज का मनुष्य इतना स्वार्थी हो गया है कि वह अपनी बुद्धि का दुरुपयोग कर अपने ही देश को नुकसान पहुंचा रहा है।

मिलावट से छुटकारा कैसे ?

मिलावट से छुटकारा पाने के लिए भारत सरकार के विपणन और निरीक्षण निदेशालय ने कदम उठाया। भारत सरकार व राज्य सरकारों ने खाद्य पदार्थों में मिलावट रोकने के लिए कई कानून बनाए हैं। इनमें दि प्रवेन्शन ऑफ फूड एडलट्रेशन एक्ट 1954, मुख्य है। परन्तु अनेक कारणों से यह अधिनियम वस्तुओं में मिलावट रोकने में असमर्थ रहा है। खाद्य वस्तुओं में मिलावट रोकने के लिए सामान का उचित मानकीकरण व अनुपात कर उसे डिब्बों या अन्य प्रकार के पैकेजों में बन्द करके बेचने की दृष्टि से कृषि उत्पाद (श्रेणीकरण और चिह्न) अधिनियम, 1937 (दि एग्रीकल्चरल प्रोडयूस ग्रेडिंग व मार्किंग एक्ट 1937) काफी सहायक सिद्ध हो रही है। इस अधिनियम की सूची में दिए गए पदार्थों को उनके गुणों के आधार पर मानकीकरण निश्चित करने का प्रावधान है। अब तक 141 पदार्थों जिनमें फल, सब्जियां, अंडे, तम्बाकू, कपास, चावल, गेहूँ, तिल्हन शामिल हैं के मानक बनाए जा चुके हैं। इस प्रकार से बनाए गए मानकों को "एगमार्क" मानकीकरण कहते हैं।

एगर्माक : आधारभूत संरचना

"एगमार्क" के अन्तर्गत श्रेणीकृत किए गए पदार्थों की शुद्धता व गुणों को सुनिश्चित रखने के लिए देश भर में 21 प्रयोगशालाएं खोली गयी हैं। इनका नियंत्रण केन्द्रीय एगमार्क प्रयोगशाला, नागपुर करती है। इनके अतिरिक्त विपणन व निरीक्षण निदेशालय के पास दो अन्न परीक्षण गृह, तीन मसाले वर्गीकरण केन्द्र, छः रुई वर्गीकरण केन्द्र और एक तम्बाकू परीक्षण प्रयोगशाला है। नागपुर में केन्द्रीय एगमार्क प्रयोगशाला और दिल्ली, कलकत्ता, बंबई और मद्रास में भी बड़ी प्रयोगशालाएं हैं। जिनमें जैविक (बायलॉजिकल) और सूक्ष्मजीवाणुक (मायक्रो-बायलॉजिकल) परीक्षण इकाइयां भी हैं। एगमार्क के श्रेणीकरण के स्तर को बनाए रखने के लिए प्रयोगशालाओं के अतिरिक्त फरीदाबाद में मंडी नियोजन और आकल्पन केन्द्र (मार्किट प्लानिंग एंड डिज़ाइन सेंटर) और निरीक्षकों को हर प्रकार से सक्षम बनाने के लिए नागपुर में प्रशिक्षण केन्द्र और प्रयोगशाला काम कर रही है। इस प्रकार विपणन व

निरीक्षण प्रयोगशाला का प्रयास रहता है कि अधिकतर बाजारों में बिकने वाले पदार्थ शुद्ध हों अर्थात मिलावट से वंचित रहें।

एगमार्क: भूमिका

एगमार्क अपनी भूमिका निम्नलिखित तरीके से निभाता है–

1. निकृष्ट चीजों से ग्राहक का संरक्षण करता है।
2. दर्जेदार चीजों की निर्मिती के उत्पादक को उत्तेजना देता है और
3. शुद्ध चीजें बेचने वाले प्रामाणिक व्यापारियों को व्यापार बढ़ाने में सहायता देकर उनकी ईमानदारी का फल देता है।

मिलावट के प्रकार

खाद्य सामग्रियों में मिलावट तथा उनका उपभोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। जिन खाद्य पदार्थों में मिलावट की जाती है उनमें से कुछ इस प्रकार हैं– खनिज तेलों से मिला खाद्य तेल, वनस्पति में चर्बी, सस्ती पीली पारे की आक्साइड से मिली पिसी हल्दी, हल्दी में रंग, मिरची व हल्दी पावडर में रेत या भूसा, चावल में चावल के टुकड़े (कणकी) या चॉक के टुकड़े इत्यादि, आटे में भूसे की मिलावट, मिर्चों के चूर्ण से मिला तथा संतरे से युक्त रंगीन किया गया मक्की का आटा, घास-बीज से युक्त शहजीरा, उपयोग की गयी तथा रंगी गयी चाय की पत्तियों से मिलावट युक्त चाय, कोलतार डाइस से युक्त कत्था, बास चूर्ण या घोड़े की लीद से युक्त धनियां, खडिया या जौ के आटे से युक्त गेहूँ का आटा, लाख दाल से युक्त बेसन, कॉफी में इमली के बीज या कोयले के पावडर का मिश्रण, शहद में गुड़ की चाश्नी की मिलावट, छोटी इलायची में बड़ी इलायची का मिश्रण, चीनी में सैकरीन की मिलावट आदि।

एगमार्क का योगदान

भारत में अधिकांश खाद्य पदार्थ बिना व्यापार चिन्ह (ट्रेडमार्क) के बेचे जाते हैं। व्यापार चिन्ह हो या न हो बेचने वाला हमेशा सर्वोत्कृष्टता का दावा करता है और खरीदने वाले के पास न तो इतना ज्ञान होता है, न परीक्षण के साधन और न ही समय ही कि वह इन दावों की पुष्टि कर सके। प्रतिदिन के छोटे ही नहीं बड़े खरीदार भी प्रयोगशाला परीक्षण करना इत्यादि झंझटों में नहीं पड़ना चाहते क्योंकि ये सब काम श्रम, व्यय और समय साध्य होते हैं। यहीं "एगमार्क" योगदान का महत्व उजागर होता है। एगमार्क चीजों की, उनके दर्जे और उनकी शुद्धता के बजाय और एक विशेषता है। योग्यता के अनुसार उनका श्रेणीकरण किया जाता है और श्रेणी के अनुसार उनका मूल्य निश्चित किया जाता है। इस प्रकार एगमार्क वस्तु की गुणवत्ता और कीमत में योग्य संबंध प्रस्थापित करता है। अतः उत्पादक अपने माल का उचित मूल्य प्राप्त करता है जो कि बाजार की अन्य चीजों के बारे में नहीं हो सकता तथा व्यापारी को अच्छी चीजें बनाने की या बेचने की प्रेरणा नहीं मिल सकती।

इन सब के अलावा एगमार्क ने विदेशी उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निर्यात गुणवत्ता के लिए जहां जरूरी था विशिष्ट निर्देश तैयार किए हैं। विदेशों में भी आज एगमार्क हमारी राष्ट्रीय गुणवत्ता का प्रतीक बन गया है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए निर्यात एक जीवन रेखा की तरह है और निर्यातित माल की विश्वसनीयता स्थापित करने में और अपने माल के सर्वोत्तम मूल्य प्राप्त करने में एगमार्क ने बहुत बड़ा योगदान दिया है।

एगमार्क की प्रगति निश्चय ही सराहनीय है लेकिन इतना सब करने के बावजूद यह पाया जाता है कि "एगमार्क" आंतरिक बाजार में अग्रसर होने में असफल रही है। इसके कई कारण हैं। निर्यात के क्षेत्र में जो भी सफलता एगमार्क ने प्राप्त की है, अधिकतर उपभोक्ता यह नहीं जानते कि एगमार्क प्रमाणन स्कीम का क्या महत्व है। रेडियो, टेलीविजन एवं अन्य माध्यमों से उपभोक्ता विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के विज्ञापन सुनते एवं देखते हैं परन्तु एगमार्क के बारे में बहुत ही कम या न के बराबर। यह दुखद बात है कि प्रचाराभाव के कारण उत्तम प्रमाणन स्कीम जो न केवल उपभोक्तओं के लिए बल्कि सही कारोबार के व्यापारियों के लिए भी मूल्यवान है, अधिक प्रचलित नहीं हो सकी। यही कारण है कि जहां एक ओर आई.एस.आई. अंकित वस्तुओं ने बाजार में काफी प्रसार किया वहां एगमार्क इतनी लोकप्रियता प्राप्त नहीं कर सकी। एगमार्क वस्तुओं की लोकप्रियता और व्याप्ती को और भी बढ़ाना जरूरी है।

इस योजना के लिये दो लाख 70 हजार रुपये की स्वीकृति प्राप्त हुई। इसमें 25 आवासों के निर्माण के साथ ही यहां रहने वाले परिवारों के लिये न्यूनतम आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराना सम्मिलित था। इनके अन्तर्गत यहां पर पीने के पानी, जल-मल निकास, शौचालय, धूम्र रहित चूल्हा, खरंजा आदि का निर्माण कराया जाना था। इस योजना के तेजी से क्रियान्वयन के फलस्वरूप मार्च 87 में इसका कार्य पूर्ण हो गया। तथा संबंधित परिवारों को उक्त आवास सौंप दिये गये। उन्हीं में से एक भिखारी भी है। इस योजना के तहत अभी 25 आवासों, फर्श, नाली, कूप, शौचालय आदि का निर्माण पूर्ण हो चुका है। गर्मियों में कुयें में पानी कम हो जाने के कारण लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग द्वारा यहां पर नलकूप खनन का कार्य किया जा रहा है, ताकि लोगों को पीने का पानी उपलब्ध हो सके। भिखारी के साथ ही 24 अन्य आवासहीन परिवारों को भी छत की सुविधा प्राप्त हुई है।

इस प्रकार शासन की आवासहीन परिवारों को अपना स्वयं का आवास उपलब्ध कराने के लिये चलाई जा रही कल्याणकारी योजना से भिखारी की अपनी वर्षों पुरानी मुराद साकार हो सकी। ऐसे में उसके मुंह से अनायास शासन के लिये दुआयें निकलना स्वाभाविक है।

सहायक संचालक, भिन्ड

राष्ट्रीय आवास नीति

राष्ट्रीय आवास नीति के मूलभूत उद्देश्य सभी व्यक्तियों विशेषकर गृहविहीनों तथा भलीभांति न बसे हुए लोगों को भूमि, सामग्रियों, प्रौद्योगिकी तथा वित्त व्यवस्था के माध्यम से अपने लिए समर्थनीय आवास प्राप्त करने के लिए प्रेरणा देना तथा सहायता देना; राष्ट्र के आवास भण्डार की सुस्थिर वृद्धि और इसका उपयुक्त संरक्षण, नवीकरण तथा उन्नयन की उपलब्धि की दृष्टि से आवास में पूंजी निवेश को प्रोत्साहन देना; पेयजल, स्वच्छता तथा अन्य मूलभूत सुविधाओं की व्यवस्था करके जीवन स्तर में सुधार करने की दृष्टि से मानव बस्तियों के वातावरण में सुधार रखना और मानव बस्तियों के क्षेत्र में स्वदेशी वास्तुकला को बढ़ावा देना तथा राष्ट्र की उन्नत विरासत को सुरक्षित करना है।

इस नीति में, गृहविहीन तथा सुविधाविहीन समूहों के लिए आवास की सुलभता में वृद्धि करने के लिए प्राथमिकता प्रदान करने पर विचार किया गया है। इन समूहों में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों और मुक्त किए गए बंधुआ मजदूर; शिल्पकारों सहित ग्रामीण भूमिहीन मजदूर; आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग; निम्न आय वर्ग; और प्राकृतिक आपदों से पीड़ित जन शामिल हैं।

राष्ट्रीय आवास नीति के उद्देश्यों को निम्नलिखित माध्यमों से प्राप्त किया जाना अपेक्षित है। आवास के लिए वाजिब दरों पर विकसित भूमि उपलब्ध करना; ग्रामीण तथा शहरी, दोनों क्षेत्रों में परिवारों को भू-धृति की सुरक्षा प्रदान करना; आवास वित्त व्यवस्था के लिए एक लाभप्रद तथा अभिगम्य संस्थागत प्रणाली का विकास करना; उपयुक्त बचत साधनों का विकास करके तथा समुचित वित्तीय प्रोत्साहन मुहैया करके आवास में बचत तथा पूंजी निवेश को बढ़ावा देना; किराये के प्रयोजनार्थ आवास में पूंजी निवेशों के लिए प्रेरक वातावरण का सृजन करना; कम लागत वाली तथा मानकीकृत भवन सामग्रियों, संघटकों और उपयुक्त प्रौद्योगिकियों तथा डिजाइनों में अनुसंधान तथा इनके विकास को बढ़ावा देना; वाजिब मूल्यों पर मानकीकृत भवन सामग्रियों तथा संघटक उपलब्ध करना; स्थानीय संसाधनों के आधार पर भवन सामग्रियों के उत्पादन तथा मानकीकृत कम लागत वाली भवन सामग्रियों तथा संघटकों को प्रोत्साहन देना; निर्माण दक्षताओं में सुधार तथा उन्नयन; सहकारी तथा सामूहिक आवास क्रियाकलापों की युक्ति संगत सहभागिता को प्रोत्साहन देना; आवास क्रियाकलाप में बाधाओं को समाप्त करने के लिए संगत कानूनों तथा

विनियमों में, जहां आवश्यक हो, परिवर्तन करना।

न्यूनतम आवास मानदण्ड

आवास योजनाएं तैयार करने के लिए जिन मार्गनिर्देशों का सुझाव दिया गया है उनके अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के लिए भू-खंड का आकार 85 वर्ग मीटर से कम नहीं होना चाहिए जिनमें सुदृढ़ निर्मित वास की व्यवस्था 20 वर्ग मीटर से कम न हो तथा उसमें पेयजल पूर्ति व स्वच्छता जैसी अनिवार्य सेवाओं का पर्याप्त प्रबन्ध होना चाहिए।

ग्रामीण आवासीय नीति में निम्नांकित बातों पर विशेष बल दिया जाएगा यथा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों, मुक्त किए गए बंधुआ मजदूरों तथा भूमिहीन श्रमिक, जिसमें शिल्पकार भी शामिल हैं, को आवास स्थल का प्रावधान करना, तथा उनको भवन निर्माण के लिए उपयुक्त तथा आर्थिक सहायता के आधार पर वित्तीय सहायता देना। विद्यमान आवास के सुधार, विस्तार तथा नवीकरण के लिए सांस्थानिक वित्त की सुलभता। स्थानीय संसाधनों पर आधारित भवन निर्माण सामग्रियों में अनुसंधान करना और उनका विकास करना तथा उनके उत्पादन एवं उपयोग को प्रोत्साहन देना; भवन निर्माण की आवश्यक सामग्रियों और घटकों, जो स्थानीय रूप से आसानी से उपलब्ध न हो, की आपूर्ति और वितरण प्रणाली को सुदृढ़ करना।

कानूनी पहलू

आवास नीति के अंतर्गत विभिन्न अधिनियमों में उल्लिखित विधि प्रावधानों के सम्पूर्ण सप्तक की समीक्षा की जायेगी। इस प्रक्रिया में भू-धृति -अर्जन, अधिकतम भूमि आदि जिनमें, गृह निर्माण, अपार्टमेंट स्वामित्व तथा अन्य संबद्ध कानूनों से सम्बन्धित नगर पालिका विनियमन शामिल हैं, से संबंधित विभिन्न कानूनों का संशोधन किया जायेगा तथा जहां कहीं भी जरूरी हो, राज्य सरकारों के सहयोग से नीति में निर्दिष्ट उद्देश्यों, प्राथमिकताओं तथा नीतियों को उपयोगी बनाने के लिए नए कानून बनाये जायेंगे।

आवास वित्त

नीति संबंधी दस्तावेज में आवास क्रियाकलापों की गति को तीव्र करने के लिए वहनीय दरों पर सांस्थानिक वित्त की पूर्ण आवश्यकता पर बल दिया गया है, जिसे प्राप्त करने के लिए नये आवास भंडारण के सृजन तथा ग्रामीण, अर्द्ध शहरी और शहरी क्षेत्रों में विद्यमान आवास भंडार के नवीकरण, उन्नयन तथा विस्तार राष्ट्रीय वित्त पद्धति के एकीकृत भाग के रूप में एक विशिष्ट आवास पद्धति विकसित की जाएगी। एक राष्ट्रीय आवास बैंक स्थापित किया जाएगा जो आवास क्षेत्र के लिए संसाधनों को संघटित करेगा, आवास वित्त संस्थाओं को स्थानीय तथा क्षेत्रीय दोनों ही स्तरों पर प्रोत्साहित करेगा और ऐसी संस्थाओं को वित्तीय तकनीकी तथा प्रशासनिक सहायता प्रदान करेगा तथा सभी स्तरों पर आवास वित्त संस्थाओं के कार्य को विनियमित करेगा।

वित्तीय प्रोत्साहन

बचत को आवास वित्त संस्थाओं में लगाने तथा आवास उद्योग में निवेश को प्रोत्साहन देने के लिए आय, सम्पत्ति तथा उपहार कर के सम्बन्धित कानूनों के अन्तर्गत मुहैया किये गये वित्तीय प्रोत्साहनों का योक्तिकीकरण किया जायेगा। जो इस प्रकार के प्रोत्साहनों के पात्र नहीं हैं उनके लिए वैकल्पिक प्रोत्साहन योजनाएं बनाई जायेंगी।

निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नीति को सुदृढ़ करने तथा एक समयबद्ध तरीके से उसके प्रभावशाली कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के विचार के साथ-साथ आवासीय आवश्यकताओं विशेषकर ज्ञात प्राथमिकता वर्गों की आवासीय आवश्यकता के अनुमानों पर तथा इन्हें समयबद्ध अवधि में प्राप्त करने के लिए संचारित किए जाने वाले संसाधनों पर आधारित सापेक्ष महत्व की योजनाएं राज्य सरकारों तथा अन्य संबंधित संस्थाओं के साथ परामर्श करके समय-समय पर प्रतिपादित की जाएंगी।

वर्ष 2001 तक शामिल होने वाले अतिरिक्त गृहवासियों को न्यूनतम आवासीय सुविधाओं पर आवास उपलब्ध कराने के लिए वर्तमान आवासीय स्टाक के रख रखाव, उन्नयन तथा सुधार में ठोस कदम उठाने तथा वर्तमान दर से कम एक तिहाई से अधिक की दर से नई आवासीय इकाइयों के निर्माण की आवश्यकता है। इस कार्य के लिए, आवास में निवेश को वर्तमान स्तर से 30-35 प्रतिशत तक बढ़ाना होगा तथा अधिसंरचना, सेवाओं तथा सुविधाओं में आवश्यक सम्मानार्थ निवेशों को सुनिश्चित करना होगा। □

बहूपयोगी आंवाला

नीलम

आंवला गढ़वाल में और कुमायूं में 4500 फीट की ऊंचाई तक मिलता है। यह अनेक भाषाओं में अनेक नामों से पुकारा जाता है- हिन्दी में आंवला, बर्मी में शब्जु, अरबी में आमलज, अंग्रेजी में एम्बिलक माइरोबैलन आदि। आंवला जब छोटा होता है तो पूरी तरह से कसैला होता है। पकने के बाद यह खाने योग्य बनता है। कच्चे आंवले के शुष्क गूदे में पैंतीस प्रतिशत टैनिक एसिड होता है। फल के गूदे में गेलिक एसिड, निर्यास, शर्करा, एल्ब्युमिन क्रावठोस और खनिज पदार्थ भी होते हैं। इसके बीजों में एक स्थिर तेल और गन्ध वाला रेजिन भी पाया जाता है।

आंवले का औषधीय प्रयोग इस प्रकार किया जा सकता है – जिन्हें नकसीर फूटने की शिकायत होती है उन्हें ताजे आंवले का या आंवले के रस का सेवन करना चाहिए। मस्तिष्क के रक्त संचार में कुछ बाधा हो, सिर व नेत्रों में जलन अनुभव होती हो या सिर दर्द की प्रवृति और विचारों की गड़बड़ी रहती हो तो आंवले का तेल सिर पर मलने से लाभ होता है। भीतरी और बाहरी प्रयोग में आंवला बालों के लिए लाभकारी है। इससे बाल घने और लम्बे होते हैं। मलाया में पत्तों का कषाय ज्वर में देने से ज्वर में आराम मिलता है। पेशाब जब कठिनाई से आता हो और उसके साथ खून भी आता हो तो आंवले का रस, गन्ने का रस और शहद के साथ लेना चाहिए। मधु मिश्रित आंवले का स्वरस मधुमेह में लाभकारी होता है। मधुमेही की पिपासा शांति के लिए ताजे फलों को चूसना उत्तम तृषाशामक का कार्य करता है। मृगी रोगी को आंवले के सेवन से लाभ पहुंचता है। गठिया (वातरक्त) के सब प्रकार के रोगी को आंवले रस में पुराना घी पका कर पीने से फायदा होता है। खूनी बवासीर के रोगी को भोजन में आंवले को विविध रूपों में खाना चाहिए जिससे रोगी को आराम पहुंचता है। सूखें आंवले के प्रयोग से खून बहना बन्द हो जाता है एवं जख्म भी जल्दी ठीक होता है। आंवले के रस को आंखों में डालने से आंखों के सम्पूर्ण रोग ठीक हो जाते हैं। खून आने पर (रक्तपित्त) खांड में मिले आंवले के चूर्ण की फक्की दी जाती है जिससे आराम पहुंचता है। दूध में पकाए आंवले के चूर्ण को घी में मिलाकर खांसी में देने से लाभ होता है। आंवले के ताजे रस में शहद और पिपली मिलाकर चाटने से हिचकी बन्द हो जाती है। मुंह में छाले पड़ जाने पर मूल की छाल को घिस कर शहद से लेप करने पर लाभ होता है। इसके प्रयोग से शरीर की बढ़ी हुई चर्बी घटती है। आंवला टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने में भी सहायक होता है।

आंवले के कुछ अन्य प्रयोग इस प्रकार हैं – आंवले को कुछ पशु बड़े शौक से खाते हैं, पत्ते चारे के रूप में इस्तेमाल होते हैं। इनका अचार और मुरब्बे भी बनाए जाते हैं। सूखे आंवलों से कपड़ों का मैल साफ किया जाता है। इसलिए साबुन के स्थान पर इनका प्रयोग किया जाता है। इनसे कपड़ा रंगने के लिए काला रंग भी बनाया जाता है। जावा में चटाइयां इनके रंगों में ही रंगी जाती है। इसके फल, पत्ते और छाल सब में टैलीन अधिक मात्रा में होने के कारण चर्म उद्योग में उसका प्रयोग बहुतायत किया जाता है। आंवले के पेड़ को कई बार काटा जा सकता है। कटने के बाद अनेक शाखाएं निकल आती हैं। इसकी लकड़ी का प्रयोग अनेक प्रकार से होता है – ईंधन, बल्लियां, कृषि के औजार, फर्नीचर आदि। पानी साफ करने के लिए इसकी छोटी-छोटी लकड़ियां पानी में डाली जाती हैं जिससे पानी साफ हो जाता है।

इस प्रकार आंवले में अनेक प्रकार के गुण हैं जिसके सेवन से विभिन्न प्रकार के रोगों से छुटकारा मिल सकता है। इसके अतिरिक्त व्यवसाय में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

सी-7/201, हौज़खास गांव,
नई दिल्ली

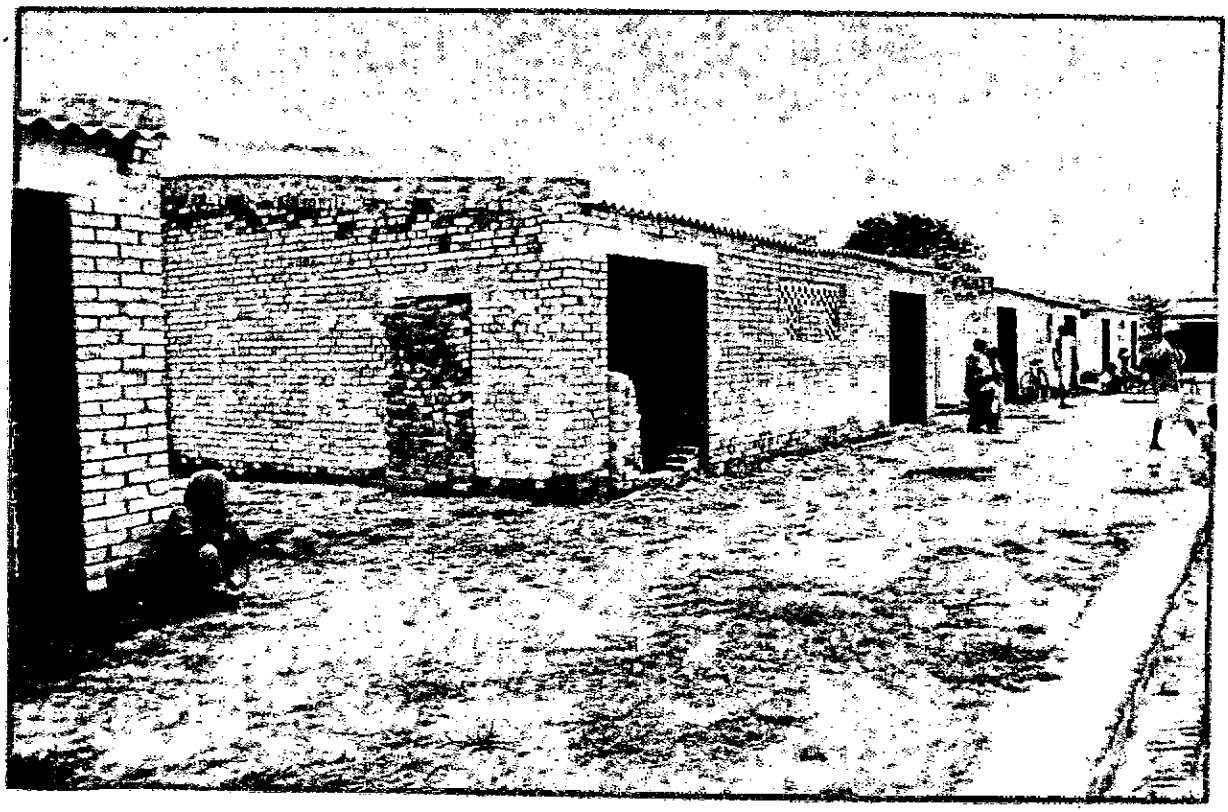

गरीबों को कम लागत वाले तथा सभी सुविधाओं से परिपूर्ण मकान उपलब्ध कराने से उनके जीवन स्तर और रहन-सहन के तौर-तरीकों पर अवश्य ही अच्छा प्रभाव पड़ता है।

[illegible]/708-57
[illegible] (डी एन) 98
[illegible] नई दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) [illegible] (डी एन) 55

RN 708-57
P & T Regd. No. D(DN)98
Licenced under U(DN)55
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

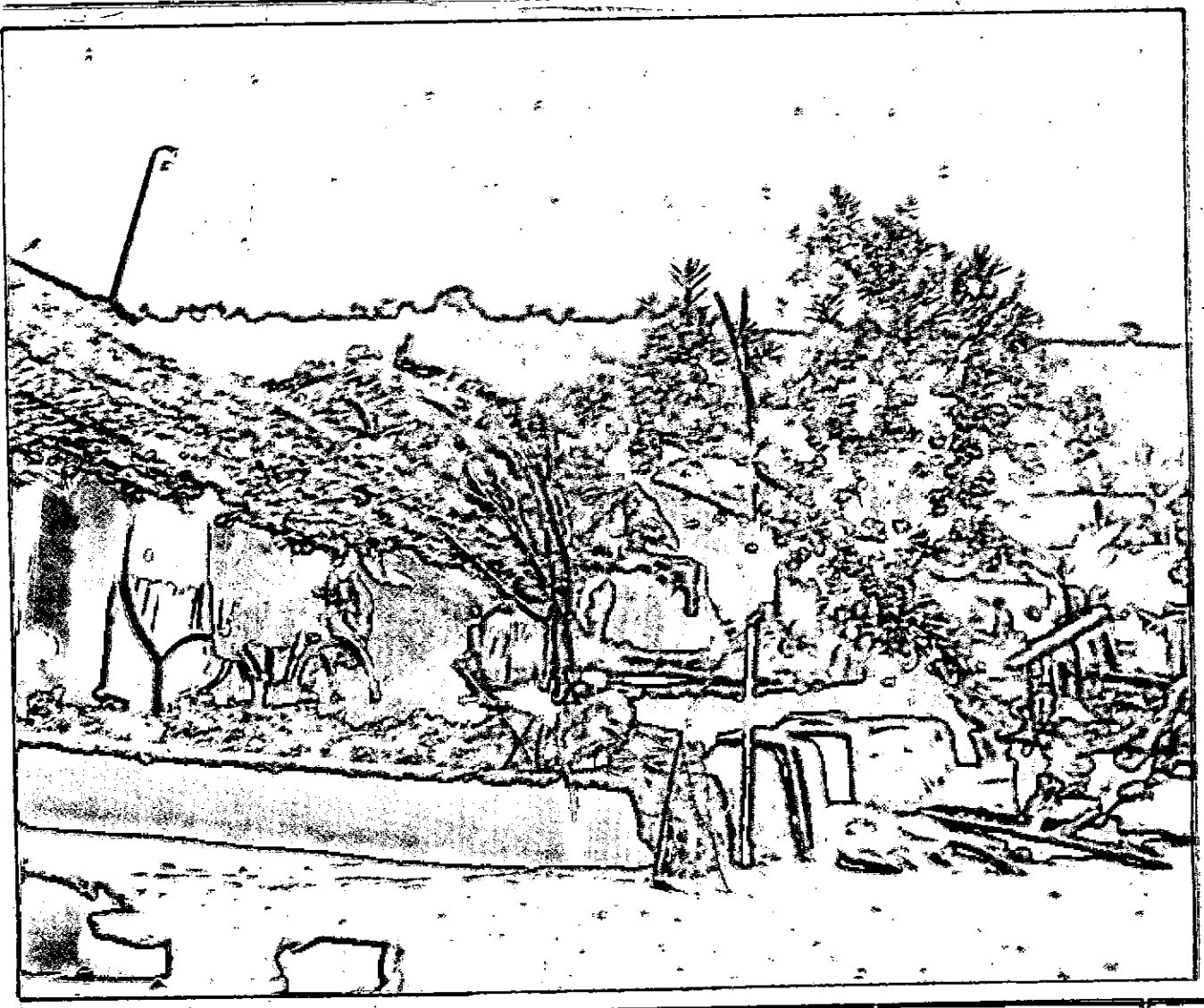

[illegible] सिंह [illegible], निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
[illegible] प्रिंटर्स, [illegible] सिंह रोड, करोल बाग